B. K. Anil Bhai.

गहन तपस्या

B. K. Anil Bhai.

तपस्वी जीवन

प्राचीन काल के तपस्वियों के तपोबल से भारतवासी परिचित हैं। किसी पर्वत गुफा में तपस्या रत एक ही ऋषि का प्रभाव दूर दूर तक दृष्टिगोचर होता था। कहीं किसी तपस्वी के आश्रम में प्रवेश करते ही मनुष्य की हिंसात्मक भावनाएं शान्त हो जाती थी, तो कहीं दूसरे ऋषि के आश्रम में कदम रखते ही मनुष्य अपने गम भूल जाता था। कोई कोई ऋषि ऐसे प्रभावशाली थे कि उनके दर्शन मात्र से ही दूसरों की चित की वृत्तियां शान्त हो जाया करती थी। हम सब भी राजऋषि हैं। पवित्रता हमारा श्रृंगार है और सम्पूर्ण अंहिसा हमारे हथियार। हम कल्प वृक्ष की जड़ों में बैठकर तपस्या करें रहे हैं, अपना खोया हुआ दैवी स्वराज्य पुनः प्राप्त करने के लिए।

वर्तमान विश्व को भी हमारी तपस्या की अति आवश्यकता हैं। जहां चारों और ईर्ष्या द्वेष की अग्नि जल रही है; जहां क्रोध और तनाव से हर मन पीड़ित है; जहां सम्बन्धों की कडुवाहट जीवन को भारी बना रही है; जहां चहुं ओर व्याप्त अन्धकार मनुष्य को पग पग पर भटका रहा है, ऐसे में हम राजऋषियों की तपस्या ही मनुष्य के सुखों का आधार बन सकती थी, उन्हें चैन की जीवन प्रदान कर सकती है।

हमारी तपस्या कठिन तप नहीं है। हमारी तपस्या जीवन को दिव्य बनाकर सम्पूर्णता की राह पर चलाने वाली मानसिक साधना है। हमारे सामने महान लक्ष्य स्पष्ट है और समय की सीमा है। रहे हुए तपस्या काल में अपनी तपस्या को सम्पूर्ण करने के लिए हमें कुछ विशेष धारणाओं की आवश्यकता है। हमारी तपस्या दृढ़ता के साथ आगे बढ़े, तपस्या से मन आनन्द की गहन अनुभूतियों में खोता रहे, कोई भी बात इस मार्ग में अवरोध उत्पन्न न करे–इन बातों को ध्यान में रखकर हम तपस्वी जीवन की मूल धारणाओं पर दृष्टिपात करें ताकि गृहस्थ में रहते हुए भी देखने वालों को हम में श्रेष्ठ तपस्वी अथवा राजऋषि

की झलक दिखाई दे।

तपस्वी जीवन वैराग्य से परिपूर्ण हो-

वैराग्य तपस्या का आधार है। वैराग्य के बिना मनुष्य के मन में पदार्थों व व्यक्तियों में राग अवश्य होता है। जहां वैराग्य नहीं, वहां इच्छाओं का विस्तार होगा और मन कदापि एकाग्र नहीं हो सकेगा।

हमारा वैराग्य विवेक से उत्पन्न व ज्ञान–युक्त हो। किसी घटना के कारण जीवन के संघर्षों के कारण या कुछ देखकर मन में पैदा हुआ वैराग्य रजोप्रधान वैराग्य कहलाता है। यद्यपि गौतम को कुछ दृश्य देखकर वैराग्य उत्पन्न हुआ परन्तु उनके अन्दर विरक्ति बीज जन्म जात ही थे, इसलिए वे महान त्याग करके भी आनन्दित हुए। अतः उनका वैराग्य कभी भी राग में परिवर्तित नहीं हुआ। परन्तु जो वैराग्य संस्कार वश या विवेक द्वारा उत्पन्न नहीं होता, उसके राग में बदलने की सम्भावना रहती है।

इसलिए हम विवेक पूर्वक वैराग्य धारण करे। इससे भी बढ़कर, हमारा ध्यान वैराग्य हमारे ईश्वरीय अनुभवों पर आधारित हो। ज्ञान से हमें ज्ञात है कि सभी पदार्थ विनाशी है और हमारे मुक्तिधाम जाने का समय है, पदार्थों में या मनुष्यों में अटक कर हम अपनी मंजिल को नहीं पा सकेंगे इसलिए हमें वैराग्य होना चाहिए।

परन्तु सर्वश्रेष्ठ वैराग्य अर्थात् भगवान के सम्मुख पाकर, उसकी छवि को इन नयनों से निहारकर, उसे अपना बनाकर, इस संसार से अन्य कुछ भी पाने की इच्छा नहीं हो। गीता में भगवान से सम्मुख गीता ज्ञान सुनकर, उसकी अतिइन्द्रिय सुख प्रदान कराने वाली मुरली की मन लुभाने वाली तान सुनकर इस संसार का कुछ भी सुनने की इच्छा न हो। इस धरा पर इन चक्षुओं से भगवान की लीलाएं देखकर, देह व देह की सुन्दरता को देखने की इच्छा न हो।

परन्तु जरा विचार करें कि यदि किसी तपस्वी का जीवन वैराग्य से ओतप्रोत न हो, यदि वह भगवान को देखने के बाद भी सांसारिक प्राप्तियों को ही ज्यादा महत्व दे रहा हो, यदि ईश्वरीय खजानों से भी बढकर उसे सांसारिक खजाने

दृष्टिगोचर होते हों, यदि वह खान–पान में मस्त हो तो क्या ऐसा तपस्वी अपनी तपस्या में सफल होगा।

बस मन गा उठे–"पाना था सो पा लिया"–ऐसा वैराग्य से परिपूर्ण परन्तु ईश्वरीय प्राप्तियों से तृप्त मन वाला तपस्वी ही सच्चा तपस्वी है। ऐसा वैराग्य उत्पन्न होते ही बुद्धि सभी किनारे छोड़ देती है, इच्छा मनुष्य को नहीं भटकाती और पदार्थों व व्यक्तियों में सहज ही अनासक्त भाव उत्पन्न हो जाता है– जो कि योगी की नींव है।

तपस्वी त्याग की प्रतिमूर्ती हो-

त्याग तपस्वियों का बल है। त्याग से ही जीवन में तेज बढ़ता है और त्याग ही उनके मनोबल को बढ़ाता है। यद्यपि वैराग्य के बाद त्याग करना नहीं पड़ता परन्तु स्वतः ही हो जाता है, तो भी तपस्या के मार्ग पर अग्रसर राहियों को त्याग की सूक्ष्मता पर ध्यान अवश्य देना चाहिए।

बड़े–बड़े त्याग तो मनुष्य पल भर में कर देता है। भगवान को पाकर भला घर–बार, बच्चे, धन–सम्पत्ति व सांसारिक पदों का त्याग करना सचमुच ही सरल काम है। लाखों ब्राह्मण इस त्याग की धारा में बह चुके है। परन्तु बड़े बड़े त्याग करने के बाद यदि कोई तपस्वी छोटे व सूक्ष्म त्याग न कर सके तो उसका बड़ा त्याग भी महत्वहीन हो जाता है।

उदाहरणार्थ– एक ऐसी माता को देखिये जो ईश्वरीय मिलन होते ही अपनी करोड़ो की सम्पत्ति का, अपने चार सुन्दर बच्चों का व अपने सभी सुख आराम का त्याग करके विश्व सेवा के लिए मैदान पर आ गई। उसने वो त्याग भावुकता वश किया, परन्तु कुछ ही समय के बाद संगठन में रहते हुए, अपने महान त्याग को भूलकर वह दूसरों का अनुसरण करने लगी। उसकी बुद्धि पुनः खान–पान में उलझ गई। रहन–सहन का सुख उसे आवश्यक लगने लगा। ज्ञान–योग के अनुभवों के अभाव में उसकी बुद्धि दूसरों को देखने में दूसरों के परचिन्तित में, व्यर्थ की बातों में उलझकर रह गई।

अब कल्पना कीजिए, उसके त्याग का क्या महत्व रहा। दूसरे लोग भी उसके त्याग को भूल गए और उसका जीवन साधारण बन कर व व्यर्थ की उलझनों

में उलझ कर रह गया। इसके विपरीत यदि वह महान नारी स्वयं के त्याग क स्वयं महत्व देती तो उसका त्याग गाया जाता और लोग उसे अपना आदर्श मानते। परन्तु बड़े त्याग के बाद वह सूक्ष्म त्याग को न समझ पाई और उसक जीवन कमल पुष्प समान खिल न सका और न ही उसमे सच्चे गुलाब के समान सुगन्ध ही भर पाई।

तो जिसे महान तपस्वी बनना है, उसे त्याग की चेतन मूर्ति बनना होगा। त्याग अर्थात् मन से कुछ भी स्वयं प्रति स्वीकार न करना। हमें यह भी न भूलना चाहिए कि ज्यों ज्यों हमारी तपस्या बढ़ेगी, प्रकृति के वैभव हमें ज्यादा ही प्राप्त होंगे, परन्तु यदि त्याग–भावना के अभाव में हमने उन्हें स्वयं के प्रति स्वीकार किया तो हमारी तपस्या अवश्य ही भंग हो जाएगी।

हमारी स्थिति ऐसी हो कि समय आने पर हम किसी भी चीज का सहर्ष त्याग कर दे। चाहे मिलने वाले अवसरों का या मिलने वाले सम्मान का। दूसरों को आगे बढ़ाने के लिए यदि हमें स्वार्थ का त्याग करना पड़े तो हमें देर न लगे। दूसरों को सुख देने के लिए यदि हमें अपने सुखों का त्याग करना पड़े तो हमें खुशी हो। दूसरों की सन्तुष्टी के लिए यदि हमें किसी वस्तु का त्याग करना पड़े तो हमे सन्तोष अनुभव है। ऐसी त्यागी आत्माएं ही अपने त्याग तपस्या के मार्ग में आने वाली सभी बाधाओं को क्षण भर में पार कर लेती हैं और ऐसी त्यागियों की तपस्या ही सुखकारी होती है।

तपस्वी साक्षी भाव धारण करें-

ज्ञानियों की साक्षी स्थिति तपस्या को अति सुखकारी बना देती है। जो साक्षी भाव में स्थित रहते हैं, उनकी बुद्धि कठिन परिस्थितियों में भी विचलित नहीं होती, फलस्वरूप वे सहज ही सर्वशक्तिवान के साथ का अनुभव कर सकते हैं। यही बाप–समान स्थिति भी है। इस अभ्यास में रहने वाले साक्षात् बाप समान बन जाते हैं और साक्षीपन के लम्बे काल के अभ्यासी योगियों द्वारा ही भक्तों को विभिन्न साक्षात्कार होंगे।

साक्षीपन क्या है? जबकि हमें ये ज्ञात है कि सभी आत्माओं को एक निश्चित पार्ट मिला हुआ हैं, उसका वही पार्ट सत्य है, तो हम सभी के पार्ट का आनन्द लें। हमें सभी का पार्ट अच्छा लगे। परन्तु जहां स्वार्थ की भावना काम करती

वहां हम दूसरों के पार्ट में कमियां निकालने लगते हैं, जहां ईष्या अपना भाव रखती हैं, वहां हमें दूसरों का अच्छा पार्ट भी अच्छा नहीं लगता।

इसलिए जो कुछ हो रहा है वही सत्य है, वही कल्याणकारी है, वही होना चाहिए।" ऐसी ज्ञान स्वरूप स्थिति में रहना साक्षीपन है। कुछ भी घटना होने पर, किसी का कैसा भी पोर्ट देखकर मन में प्रश्न न उठे कि यह क्यों–यही साक्षीपन है।

अपने कर्म करते हुए, दूसरों के कर्मो को सुधारते हुए, दूसरों को शिक्षाएं देते हुए व अपनी जिम्मेदारियों को पूर्ण करते हुए भी साक्षी रहें। साक्षी रहकर स्वयं का श्रेष्ठ पार्ट बजाने से कभी भी मन भारी व उदास नहीं होगा।

परन्तु ध्यान रहे यदि मन में किसी के प्रति नफरत है या लगाव है तो साक्षीपन भूल जाएगा। हमें तो साक्षी होकर महाविनाश को देखना है। यदि लम्बे समय में हमने साक्षीपन न अपनाया तो विनाश से उत्पन्न भय हमें अवश्य ही प्रभावित करेगा और हम अपनी तपस्या में स्थिर नहीं रह सकेंगे। तो कुछ भी होता देखकर न प्रश्न उठे और न आश्चर्य हो–यह है साक्षी भाव।

ऐसा साक्षी भाव अपनाने के लिए हमें निरन्तर ज्ञान की स्मृतियों में रहना चाहिए। जब सभी मृत्यु को प्राप्त हो तो हमें यह याद रहे कि आत्माएं घर जा रही है। जब लोग विनाश की आपदाओं में हाहाकार करें तो हमें याद रहे कि सभी आत्माएं अपने कर्मों की सजा भोग कर पावन बन रही है। जन प्राकृतिक आपदा से विनाश का ताण्डव नृत्य करें तो हमें याद रहे कि प्रकृति का शुद्धिकरण हो रहा है। हमें यह भी याद रहे कि हमने ही तो महाकाल को बुलाया है।

तपस्वियों की भावनाएं श्रेष्ठ हो-

श्रेष्ठ भावनाएं, श्रेष्ठ जीवन का प्रतिबिम्ब है। यदि कोई मनुष्य महान तपस्वी बनकर दूसरों के प्रति अपनी भावनाओं को सुखद व निर्मल न बना पाया तो उसकी शक्तियां नष्ट हो सकती ह। बदले की भावना या सूक्ष्म क्रोध की भावना तपस्वी को चैन नहीं लेने देगी। शास्त्रों में ऐसे अनगिनत उदाहरण हैं कि अनेक राक्षसों ने व अनेक मनुष्यों ने अपने दुश्मनों से बदला लेने के लिए

तपस्या की और वरदान प्राप्त किये। परन्तु हम जानते हैं कि वे महान न
कहलाए। उनके वरदान भी व्यर्थ में ही नष्ट हुए।

हमारी तपस्या विश्व कल्याण के लिए है। हमारी भावनाएं अनेक आत्माओं
लिए सहारा है, इसलिए हमें श्रेष्ठ व शुभ भावनाओं का सहारा सभी को दे
है। हम यह अच्छी तरह से समझ लें कि हमारी जैसी भावनाएं दूसरों के प्र
होगी, वैसा ही व्यवहार हमें दूसरों से प्राप्त होगा। अपनी भावनाओं को श्रेष्ठत
में बदल कर हम अपने सम्बंधों को मधुर बना सकते हैं। क्योंकि सम्बन्धों क
मधुर बनाना भी हमारी तपस्या का महत्वपूर्ण लक्ष्य है।

परन्तु यदि कोई तपस्वी पारस्परिक संघर्ष पैदा करे, सेवाक्षेत्र में विघ्न पैदा क
तो उसे सच्चा तपस्वी नहीं माना जाऐगा। तपस्वी वही है जिसके अंग अं
शीतल हो। सच्चा तपस्वी वही है जिसके जीवन में दुर्भावनाओं की दुर्गन्ध
पूर्णतया लोप हो गई हो। सच्चा तपस्वी वही हैं। जिसकी उपस्थिति वातावरण
को मधुर, हल्का व आनन्द कारी बना देती हो।

तपस्वी कहीं भी उलझा हुआ न हो

तपस्या निर्बन्धन स्थिति है। मन की उलझन तपस्वी के लिए बड़ा बन्धन है
कर्म भी तपस्या में यदि बन्धन बन रहे हैं तो ऐसा तपस्वी बन्धनों की रस्सियों
में बन्धकर असफल हो जाता है। इसलिए तपस्या के श्रेष्ठ मार्ग पर चलने
वालों को चाहिए कि वे स्वयं को कहीं भी उलझाए नहीं। संगमयुगी जीवन
उलझनों व कर्म बन्धनों में न बीते। ज्ञान का प्रकाश पाकर और भगवान का
साथ पाकर भी यदि किसी ने स्वयं को उलझनों से मुक्त रखना न सीखा तो
समझो कि उसने कुछ भी नहीं सीखा।

तो न हम सम्बन्धों में अटकें, न कर्म हमें बांध सके और न जीवन की समस्याएं
हमें अपने जाल में उलझा सकें–इसके लिए हमें चाहिए सरल स्वभाव। जटिल
स्वभाव, कटु स्वभाव, मनुष्य को सहज ही उलझा देता है। अब यह हमारे स्वयं
के ऊपर है कि हम स्वयं को उलझायें या मुक्त रखें। भला विचार करें क्या
तपस्वी को कोई बन्धन बांध सकता है? सम्पूर्ण विश्व को मुक्ति का मार्ग
दिखाने वाले क्या कहीं उलझ सकते हैं?

वी सहनशील व क्षमाशील हों-

तपस्वियों की शोभा है, यही उनका बल है। तपस्वी को कभी भी ऐसा नहीं
ता कि वह बहुत सहन करता है। हम दूसरों के कटु बोल सुनकर खुशी
हन करें व उन्हें क्षमा करे दें, तो कभी भी हमारा चित्त प्रतिशोध की भावना
ही जलेगा।

सहनशील बने वे महान बन गये। तो तपस्वी को क्रोध व अहंकार की अग्नि
जलानी चाहिए। शीतल चित्त से इस अग्नि को इतना शान्त कर दें तेज
ान भी इसे भड़का न सके। वही हमारी तपस्या की प्रत्यक्ष सिद्धि होगी।

प्रकार हम महान तपस्वी बनकर संसार से विकारों की अग्नि को शीतल
। हमें तपस्या करने का सर्वश्रेष्ठ अवसर प्राप्त हुआ है। हमारी तपस्या
व की समस्याओं का निदान करेगी। हमारी तपस्या अनेक भटके तपस्वियों
सन्मार्ग दिखायेगी। हमारी तपस्या अनेकों के कष्ट मिटायेगी।

हम आराम परस्ती न बनें। तपस्वी कभी नींद के वंश नहीं होते, तपस्वी
भी अलबेले नहीं होते। हमें अपनी तपस्या से सर्वप्रथम अपने जीवन को
लोकित करना है, ताकि हमारा सम्पूर्ण अन्धकार मिट जाए, हमारे चित्त में
ा हुआ भय भी नष्ट हो जाए और हमारा जीवन विश्व के लिए लाईट हाउस
जाए। तो आओ हम ब्रह्मवत्स तपस्वी जीवन बनाकर सम्पूर्णता की ओर
लें।

और फैल रही हैं.... निर्बल आत्माएं बल का अनुभव कर रही हैं....

अनुभव करें कि मेरे चारों ओर अशान्ति में तड़फती आत्माएं शान्ति की मांग कर रही हैं.... है शान्ति देवी, हमें शान्ति दो, हमें शान्ति दो ... आप ही हमारे सहारे हो....शिव बाबा, शान्ति के सागर परमधाम से मुझे शान्ति की किरणें दे रहे हैं.... मैं आत्मा पीस हाउस हूँ... मुझसे शान्ति के वायब्रेशन्स समस्त विश्व में फैल रहे हैं.... आत्माएं शान्त होकर सुख चैन का अनुभव कर रही है.... इस प्रकार गहन शान्ति की अनुभूति की ओर चलें....

प्रेम–स्वरूप स्थिति का अनुभव करें....

मैं आत्मा प्रेम–स्वरूप हूँ... प्रेम के सागर बाबा ने आकर मुझे अपना निर्मल स्नेह दिया.... हमारे सभी कष्ट मिटा दिए.... हमारी बिगड़ी को बनाया.... समय पर हमारी मद्द करके अपने सच्चे प्रेम को प्रकट किया..... बाबा आप हमारे नयनों के तारे हों.... आपने हमारे लिए क्या नहीं किया.... आपने आकर हमारे जन्म–जन्म की प्यास बुझाई.... हमारे जन्म–जन्म के दुख हर लिए .... हम आपके प्यार पर कुर्बान हुए....

बाबा.... आपने हमें अपनी शीतल छाया में बैठकार विकारों की अग्नि को शान्त किया.... हम तुम्हें ढूंढ ढूंढ कर थक गए थे.... आपने आकर स्वयं हमें ढूंढा.. .. अपनी पावन दृष्टि देकर हमें स्वच्छ किया.... आपने हमें भटकने स बचाया.

जितना प्यार आपने हमें दिया, उतना भला कौन करेगा..... आपने हमारी भूलों को क्षमा करके हमें गले से लगाया.... जिन्हें जग ने ठुकराया .... आपने आकर उन्हें सहारा दिया...आप आकर हमारे खिवैया बने... हम अवश्य ही आपके प्यार का रिटर्न देंगे.... बाबा हम सच्चे दिल से आपकी शुक्रिया करते हैं....

चलें.... बाबा से सर्व सम्बन्धों का अनुभव करें....

हे प्राणेश्वर, आप ही हमारी सच्चे प्रियतम व सच्चे मित्र हो.... अब आपको हमने अपने नयनों में समाया है... आप ही हमारे सर्वस्व हो..... आपके अतिरिक्त हमारे दिल में अन्य किसी को कोई स्थान नहीं..... बाबा अब हम सदा आपके ही साथ रहेंगे....

इस प्रकार उसके प्यार में मग्न हो जाएं....

अब हम १० मिनट के लिए बाबा की छत्रछाया में बैठेंगे....

हम सर्व शक्तिवान बाप के पास जाकर नीचे आने के लिए उनका आह्वान करते हैं.... बाबा नीचे आकर हमारे सिर के ऊपर स्थित हा जाते हैं.... उनकी किरणें चारों और फैल रही हैं... इस शक्तिशाली छत्र के नीचे मैं आत्मा पूरी तरह निर्भय हूँ... माया का कोई भी वार मुझ पर पर नहीं हो सकता.....

मैं शिव शक्ति हूँ.... मास्टर सर्व शक्तिवान हूँ... अत्यन्त शक्तिशाली आत्मा.... सर्व शक्तियां मेरे चारों ओर शक्तिशाली कवच बनाये हुए हैं.... मैं असुर सहारिनी हूँ.... इस कवच के पहनने से संसार का दूषित वायुमण्डल मुझ पर प्रभाव नही डाल सकता....

मैं शेर पर सवार दुर्गा हूँ.... ज्ञान योग के अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित .... सबके कष्ट मिटाने वाली... बिगड़ी बनाने वाली.... वरदान देने वाली ... सर्व शक्तिवान से शक्तियों की रंग बिरंगी किरणें मुझ पर पड़ रही हैं और मुझमें आठ भुजाओं का निर्माण कर रही है।

मैं शक्ति आत्मा राजा हूँ... भ्रकुटि सिंहासन पर विराजमान हूँ.... मेरे सामने मेरे दोनो महामंत्री मन, बुद्धि बैठे हैं... उसके बाद मिलिट्री कमान्डर आठों शक्तियां विराजमान हैं.... ये है मेरा सुन्दर आलोकिक दरबार.... दोनों मंत्रियों व सर्व शक्तियों पर मेरा पूर्ण अधिकार है.... वे मेरे पूर्ण सहयोगी हैं.... मेरे आज्ञा के बिना कहीं नहीं कहा जा सकते....

अब आओ, हम अपने दिव्य स्वरूप का आह्वान करें....

मेरे सामने मेरा दिव्य स्वरूप विष्णु चतुर्भुज खड़ा है... यह मेरा भविष्य स्वरूप है.... उससे चारों ओर दिव्य तेज फैल रहा है.... अत्यन्त तेजस्वी .... वह मेरी ओर आ रहा है... धीरे–धीरे... मेरी ओर... बहुत समीप आ गया.... और... मुझमें. ... समा गया... और इस प्रकार मैं हो गया विष्णु स्वरूप....

बाबा... आप हमें कितना महान.... विश्व महाराजन बना देते हो.... वाह बाबा वाह... वाह हमारा भाग्य....

इसी तरह.... मेरे सामने मेरी सम्पूर्ण फरिश्ता स्वरूप स्थिति है... जिससे चारों और श्वेत रश्मियां प्रवाहित हो रही हैं.... सूक्ष्म प्रकाशमय काया..... यही तो मुझे बनना है.... देखों फरिश्ता शैनः हमारी और बढ़ रहा है.... हमारे अति समीप आ

गया है और हम में समा गया... और हम हो गए फरिश्ते .... उड़ने वाले... पूर्णतया हल्के.... हम चलते हैं विश्व की सैंर पर....

बाबा.... ओ प्यारे बाबा.... आप कल्याणकारी हो... हम गाते थे केवल.... अब हमने आपको जग का कल्याण करते देखा....बाबा यदि आप ना आते .... यदि आप हमें अपना न बनाते तो.... आज हम काम की अग्नि में जल जल कर नष्ट हो जाते....न जाने कहां कहां भटकते.... दिल को सहारा देने वाले बाबा... हम तुम्हारे प्यार को कभी भी भूल न पायेंगे... हम प्रतिज्ञा करते हैं कि तुम्हारे मन की कामनाओं को अवश्य ही पूर्ण करेंगे...

आओ स्वदर्शन चक्रधारी बनें....

चलो .... वहीं जहां हम इस धरा पर आने से पूर्व थे.... वहीं हमारा स्वीट साइलेंस होम... जहां चारों ओर असीम शान्ति विद्यमान है, मैं आत्मा वहां बाबा के अति समीप विराजमान हूँ...

मैं ज्योति पुंज परमधाम से उतर कर नीचे आ रही हूँ... और अपने दिव्य शरीर में प्रवेश कर लेती हूँ.... देखो अपना दिव्य स्वरूप अपने सामने ... यह सम्पूर्ण पवित्र स्वरूप मेरा ही स्वरूप है....

भिन्न भिन्न शरीरों से गुजरती हुई.... अपना श्रेष्ठ भाग्य भोगती हुई.... मुख्य मुख्य पार्ट बजाती हुई मैं आत्मा अब इस वर्तमान देह में बैठी हूँ.... ऐसे ही मैंने अनेक देह धारण किये हैं.... कभी नर का कभी नारी का... अब मेरी यात्रा पूर्ण होने को है....

स्वयं भगवान अब मेरा स्वागत करने के लिए हाथ में विजय का झण्डा लेकर मेरे पास आया है... कह रहा है... चलो बच्चे... चलो अपने घर.... और मैं आत्मा बाबा के साथ उड़कर घर जा रहीं हूँ.... पहुंच गई वहीं जहां से उतरी थी...

हमारे एक ओर शिवबाबा, दूसरी ओर ब्रह्मा बाबा स्थित है सर्वशक्तिवान हमें शक्तियों को .... दे रहे है और ब्रह्मा माँ शीतलता की लहरे दे रही हैं। इस प्रकार दोनों जन्म जन्म के लिए हमारा श्रंगार कर रहे है।

हमारा कन्ट्रोल हो जायेगा और प्रकृति के जिस तत्व को हम जो भी आदेश देंगे वह उसे स्वीकार करेगा। यह है आत्मिक स्वरूप पर एकाग्रता की एक प्राप्ति।

अपने फरिश्ते स्वरूप का दर्शन करते हुए उस पर मन–बुद्धि को एकाग्र करने से अपने फरिश्ते रूप का सहज दर्शन होगा। इस अभ्यास को बढ़ाने से फरिश्ते करके कहीं भी भ्रमण कर सकेंगे अर्थात् विश्व भ्रमण कर सकेंगे।

अपने भविष्य स्वरूप को प्रकट करके उस पर एकाग्रता करने से अपना भविष्य स्पष्ट होता जाएगा। और ऐसे ही "स्वदर्शन चक्र" पर एकाग्र होने से स्वर्ग के सभी जन्म स्पष्ट होने लगेंगे।

निराकार परमपिता पर एकाग्र होने से तो अनगिनत अनुभव होंगे। मन–बुद्धि के शक्तिशाली होने के साथ 'दूरदृष्टि' का वरदान प्राप्त होगा। इस विश्व में कहां क्या हो रहा है–जहां का भी संकल्प करेंगे, वहां के दृश्य स्पष्ट होंगे।

एकाग्रता का अभ्यास बढ़ाने से मन पर पूर्णता कन्ट्रोल प्राप्त होगा। मन को जहां चाहे, जैसे चाहे, व जितने समय के लिए चाहे स्थिर कर सकेंगे। जो आत्माएं इस अनुभव को प्राप्त करेगी, वे विश्व राज्य का सर्वश्रेष्ठ भाग्य प्राप्त कर सकेगी।

सम्पूर्ण एकाग्रता होने पर सम्पूर्ण पवित्रता, सम्पूर्ण आनन्द व सम्पूर्ण सन्तुष्टता की प्राप्ति होगी। मन अतीन्द्रिय सुख में निरन्तर रमण करने लगेगा और योगी निरन्तर योग–युक्त होकर कर्मातीत स्थिति को प्राप्त कर लेगा।

एकाग्रता की शक्ति वालों से ही 'देह के लोप' होने का अनुभव होगा। अर्थात् वे इतने सक्ष्म स्वरूप में स्थित हो जायेंगे कि दूसरो को उनका देह दिखाई नहीं देगा।

वे दूसरों के मनोभावों को सहज ही पकड़ सकेंगे। दूसरों के भविष्य को जानना उनके लिए अति सरल होगा। लोग उनके नयनों द्वारा अपने भाग्य का अवलोकन कर सकेंगे।

एकाग्रचित्त योगी अपनी संकल्प शक्ति से जो चाहे कर सकेंगे। वे अपनी

संकल्प शक्ति से ही अपने सम्पूर्ण कार्यो का संचालन कर सकेंगे।

अपनी बुद्धि को आत्मिक स्वरूप पर एक मिनट स्थिर करने का अभ्यास प्रारम्भ करें, उसे ३ मिनट, ५ मिनट फिर १० मिनट तक ले जाएं। इसी तरह दृढ़तापूर्वक प्रत्येक लक्ष्य पर अभ्यास करें। इसके लिए प्रारम्भ में किसी गीत, संगीत या ट्यून का भी आधार लिया जा सकता है। ध्यान को एकाग्र करने का भी अभ्यास किया जा सकता है।

हे महान चुने हुए योगियों, अब अपनी रुचियों का त्याग कर दो, अब अपने विस्तार को समेट लो, सेवाओं के विस्तार में बुद्धि को न उलझाओ, दूसरों पर ध्यान न दो, केवल स्वयं पर ही ध्यान दो। तुम्हें एकाग्रता के बल से आंश्चर्यजनक व चमत्कारिक कार्य करने हैं, निर्बलों को बल देना है, दृष्टि देकर भक्तों को तृप्त करना है। अपनी एकाग्रता के महत्व को जानकर दत्तचित्त होकर इस शक्ति को बढ़ाओं और विश्व को दिखा दो कि योग–शक्ति वह महान कार्य कर सकती है जो विज्ञान की पहुंच से भी परे है।

"संस्कार परितर्वन" - गहन तपस्या

संस्कारों की जटिलता योग साधना के आलौकिक जीवन में सर्वाधिक बाधक है। एक सफल योगी संस्कारों के अधीन कदापि नही होता। जहां महानता की गहराई तक नहीं पहुंचे हैं तो साधक साधारण बनकर ही रह जाता है। अनेक राजयोगी कई वर्षों तक संस्कारों से संघर्ष करने के उपरान्त भी संस्कारों के स्वामी नहीं बन पाते। यदि क्रोध को साथ लाये थे, तो जीवन यात्रा में उसका साथ नहीं छोड़ा, फलस्वरूप न दूसरे उन्हें योगी मान सके और न वे स्वयं अपने योगी जीवन से सन्तुष्ट हो सके।

"संस्कार परिवर्तन से विश्व परिवर्तन" – यह है प्रेरणा के स्त्रोत ईश्वरीय महावाक्य। सारा संसार जब हमारा जीवन परिवर्तन देखेगा, इतना ही नहीं जब हमारे जीवन से उन्हें दैवी संस्कारों की झलक मिलेगी तो वे ईश्वरीय कार्य की सत्यता को नकार नहीं सकेंगे। तो हमें अपने संस्कारों को दिव्य संस्कारों में बदलना है।

आज यदि संसार पर एक नजर दौड़ाएं तो प्रायः सभी मनुष्यों के संस्कार दिनोंदिन आसुरी बनते जा रहे हैं। गिरावट की ओर तीव्र गति होने के कारण कोई भी मनुष्य अपने संस्कार परिवर्तन का विचार नहीं रखता। बल्कि देखा यही जाता है कि यदि किसी बच्चे में उदाहरणार्थ क्रोध का संस्कार है या झूठ बोलने का संस्कार है तो आयु बढ़ने के साथ वह संस्कार अधिक जटिल होता जाता है और जीवन के अन्तिम भाग में वही संस्कार उसकी परेशानियों के कारण बन जाता है।

आज संसार में मनुष्य, सबसे अधिक दुखी अपने स्वयं के संस्कारों से है। संस्कार वश वह स्वयं भी दुखी हो रहा है व दूसरों को भी दुखी कर रहा है। संस्कार परिवर्तन का मार्ग अब स्वयं सर्व समर्थ परमात्मा ने प्रशस्त किया। उन्होंने हमारे मूल संस्कारों की याद दिलाकर हमारे स्वमान को जगाया और पुनः उन्हीं आदि संस्कारों को जीवन में लाने का सरल मार्ग बताया। उसी ईश्वरीय मार्ग प्रदर्शन के आधार पर हजारों आत्माएं आज तक अपने संस्कारों को श्रेष्ठ बना चुकी है।

किसी के संस्कार बहुत तीव्रता से बदलते हैं तो किसी के उसमें वर्षों का समय लग जाता है। यदि इसके कारणों पर दृष्टिपात करें तो कुछ रहस्य समझ में आ जाते है।

जो व्यक्ति अपने गलत संस्कारों को जान लेता है, अर्थात जिसकी पकड़ उसके संस्कारों पर है, जो यह जानता है कि मुझमे यह गलत संस्कार है और उसे बदलने का दृढ़ संकल्प लेकर सत्य विधि अपनाता है, वह तो तीव्रता से सफलता के शिखर पर चढ़ जाता है, परन्तु जो साधक सदा दूसरों को ही दोष देता है, जिसकी अंगुली सदा दूसरों पर ही रहती है वह न तो अपने संस्कारों की दुर्बलता को पहचान ही पाता है और न ही उसके लिए कोई पुरुषार्थ ही अपनाता है। परिणामतः जीवनभर वह संस्कारों के अधीन रहता है। तो पहली आवश्यकता इसी बात की है कि हमें अपनें संस्कारों की पकड़ हो।

सभी के अन्दर सभी कमजोर संस्कार नहीं होते। एक कड़े संस्कार के पीछे ही कई संस्कार भी जुड़े रहते हैं और यदि वह पुरुषार्थी अपने उस मूल कड़े संस्कार को जान ले व उसे बदल दे तो सारे संस्कार सहज ही बदल

जाते हैं।

तो यहां पर हम कुछ मुख्य संस्कारों की लिस्ट दे रहे हैं। इन्हें देखकर कोई भी पुरुषार्थी स्वयं की जांच कर सकता है कि मुझमें कौन–सा कमजोर संस्कार है जो मेरे मार्ग में बाधक है। हमें ध्यान रहे कि कि हम अपने कमजोर संस्कारों को यह कहकर मान्यता न दे दें कि यह तो होगा ही। हम अपने आदर्श सम्पूर्ण स्वरूप को ध्यान में लायें तो हम सहज ही बदल जाते हैं।

तो यहां पर हम कुछ मुख्य संस्कारों की लिस्ट दे रहे हैं। इन्हें देखकर कोई भी पुरुषार्थी स्वयं की जांच कर सकता है कि मुझमें कौन–सा कमजोर संस्कार है जो मेरे मार्ग में बाध है। हमे ध्यान रहे कि हम अपने कमजोर संस्कारों को यह कहकर मान्यता न दे दें कि यह तो होगा ही। हम अपने आदर्श सम्पूर्ण स्वरूप को ध्यान में लायें तो हमें सहज ही एहसास हो जाएगा कि ये ये संस्कार हमारे अन्दर नहीं होना चाहिए।

तो वे संस्कार जो योगियों को शोभा नहीं देते, अथवा यों कहें कि हम ये जानते हैं कि हम ही वे इष्ट देवी देवता हैं जिनकी भक्त पूजा कर रहे हैं, जिनकी प्रतिमाओं के मुख मंडल भी श्रेष्ठ प्रेरणा देते हैं, जिनकी मूर्तियों के मुख के दर्शनों के प्यासे भक्त प्यास सहकर ही बाहर धूप में लाइन लगाये रहते हैं–ऐसे इष्ट को ये संस्कार कहां तक शोभा देंगे–यह स्वयं ही विचार करने का विषय है।

उदाहरणार्थ–यदि कोई देवी आंसू बहाती हो, या कुछ मांगती हो या दूसरों को डांटती है या स्वयं परेशान रहती हो तो भक्तों पर उसकी क्या प्रतिक्रिया होगी।

तो संस्कारों की लिस्ट निम्न प्रकार है–

अपवित्रता के कड़े संस्कार, जो बार बार आत्मा को दैहिक आकर्षण की ओर ले जाते हों।

रोन व रूसने के संस्कार

मूड ऑफ करने के व छोटी छोटी बातों में अपसैट होने के संस्कार

शीघ्र ही नाराज होने के संस्कार व सदा असन्तुष्ट रहने के संस्कार

आलस्य कें संस्कार, आज का काम कल पर छोड़ने के संस्कार

अलबेलेपन के संस्कार, जिम्मेदारी न सम्भालने के संस्कार

व्यर्थ बातों में रूचि रखने के संस्कार

लगाव–सुझाव व शीघ्र ही प्रभावित होने के संस्कार

कडुवा बोलने के संस्कार या बहुत बोलने के संस्कार

शीघ्र ही फीलिंग में आने के संस्कार

काम अधूरा छोड़ने के संस्कार या रुचिपूर्वक काम न करने के संस्कार

ईर्ष्या घृणा व परचिन्तन के संस्कार

वैर विरोध करने के संस्कार

संशय बुद्धि रखने के संस्कार

उदास व निराश होने के संस्कार

चिड़चिड़ेपन के संस्कार या छोटी छोटी बातों पर क्रोधित होने के संस्कार

भयभीत होने के संस्कार

परेशान होने के संस्कार

लोभ के संस्कार, संग्रह करने के संस्कार व सदा ही मांगते रहने के संस्कार

दुख देने के संस्कार, तंग करने के संस्कार या दुखी रहने के संस्कार

अलग अलग रहने के संस्कार अर्थात् किसी से भी न मिलने के संस्कार

स्टिक्ट (कड़े) रहने के संस्कार

झूठ बोलने या चोरी करने के संस्कार

आराम–पसन्दी के संस्कार या ज्यादा सोने के संस्कार

नाजुकपन के संस्कार

हमें संस्कार बदलने हैं, पहले स्वयं के फिर दूसरों के। यदि हम अपना संस्कार परिवर्तन नहीं करते तो योग द्वारा प्राप्त हुई शक्तियां व्यर्थ चली जाती है। क्योंकि हमारा चेहरा हमारे संस्कारों का प्रतिबिम्ब है, फलतः सेवा क्षेत्र पर भी हमारा रुहानियत का प्रभाव क्षीण हो जाता है, हम में आत्म–बल भी नहीं रहता और आत्म–विश्वास की भी कमी हो जाती है।

तो जिस भी संस्कार को हम बदलना चाहें, हम उसके पीछे पड़ जाएं और एक मास की तपस्या करें तो अवश्य ही दृढ़ता के द्वारा हम सफलता के अधिकारी बन जाएगें।

संस्कार परिवर्तन की चार विधियां हैं -

१. ज्ञान बल के द्वारा–हम उस संस्कार का पूर्ण विश्लेषण करें व ज्ञान–बल से उसका परिवर्तन करें।

२. योग–बल से– योग की बीज रूप स्थिति द्वारा संस्कारों के बीज भी नष्ट हो जाते हैं। तो बीज रूप स्थिति द्वारा संस्कारों को बीज सहित नष्ट करना है।

३. अपने श्रेष्ठ स्वमान के द्वारा श्रेष्ठ संस्कारों को प्रकट करके।

४. अपने ईश्वरीय संस्कारों को जानकर उन्हें कार्य में लगाने से।

मान लो किसी भी "फीलिंग" का बहुत कड़ा संस्कार है। वह कुछ भी सहन कर नहीं सकती। प्रत्येक छोटी बात की फीलिंग उसकी खुशी हर लेती हैं उसका मूड ऑफ हो जाता है–फलस्वरूप वह रो लेती है और जीवन में उदासी, निराशा व अकेलेपन का अनुभव करती हैं। ये सब लक्षण एक ही फीलिंग के संस्कार के हैं। फीलिंग बीज है और ये सब है वृक्ष।

अब हम ज्ञान बल से उसका विश्लेषण करें। हम स्वयं से पूछें व स्वयं को समझाएं कि मैं इतना फील क्यों करती हूँ? किसी ने मुझे कुछ कहा तो इसमें क्या हुआ, मैं इतना नाजुक क्यों हो गई कि कोई मुझे कुछ कहे ही नहीं।

अब ज्ञान–बल का प्रयोग करें....मैं आज से किसी की भी बात को सहज भाव से लूंगी, गम्भीरता से नहीं। प्रत्येक बात पर मुस्कुराऊंगी। मैं तो ज्ञानी हूँ.... मैं इतनी कमजोर क्यों बनूं? मुझे तो महान ईश्वरीय कार्य करने हैं, भगवान ने

मुझसे आशा रखी है। मैं तो भरपूर आत्मा हूँ.... भगवान मेरे लिए खुशियों के खजाने लाया है, मैं खुशी गायब क्यों करूं? आदि आदि। इस प्रकार चिन्तन करते हुए स्वयं को सशक्त बनाना चाहिए और दिनोंदिन फीलिंग कम करनी चाहिए। आप प्रतिज्ञा भी कर सकती हैं कि आज से मैं फील करूंगी ही नहीं, चाहे मुझे कोई कुछ भी कह दे।

यह भी देख लें कि मेरी फीलिंग का और भी कोई कारण है? हमारी कामनाएं हमें कमजोर करके फीलिंग में लाती है। हम दूसरों से ज्यादा स्नेह व सहयोग की कामना रखते हैं जो पूर्ण न होने पर हमें फीलिंग आती है। तो दूसरों से कामनाओं का त्याग कर दें। इस प्रकार संकल्प बदलने से संस्कार बदल जाएगे।

इसी प्रकार ज्यों हमारा बीज रूप का अभ्यास बढ़ेगा, आत्मा में बल भरता जाएगा और ये संस्कार पूर्णता लोप होते जाएंगे। हमें योग की अग्नि भी इतनी तीव्रता से प्रज्ज्वलित करनी है कि संस्कार बीज सहित नष्ट हो जाए। यदि किसी संस्कार का अंश भी बाकी रह गया तो विनाश के समय वातावरण की मदद से वही अंश पुनः वृक्ष बन जाएगा।

इसी तरह हम अपने स्वमान को प्रकट करें। "मैं शिव शक्ति हूँ" "मैं पूजनीय दर्शनीय मूर्त हूँ" अपने इस स्वमान में रहें तो स्वतः ही हमें लज्जा आएगी और महसूस होगा कि ये रोना रुसना, ये फीलिंग व ईर्ष्या घृणा हमारे लिए नहीं। हम इनसे बहुत दूर हैं।

"हम महान हैं", भगवान के वारिस है"– ये स्वमान तीव्रता से हमारे संस्कारों को दिव्य करेगा। स्वतः ही अन्तर्मन से आवाज गूंजेगी–तुम महान हो, ये तुम्हारे संस्कार नहीं, तुम तो रॉयल कुल के हो, तुम्हारे तो दैवी संस्कार हैं और सहज ही उन रॉयल संस्कारों से हमारा श्रृंगार होता जाएगा।

इसी तरह हम अपने ईश्वरीय संस्कारों को प्रकट करें। हमारे ईश्वरीय संस्कार हैं–दातापन के, वरदातापन के, सुख दातापन के, करूणा व दया के, क्षमा व परोपकार के। अपने इन संस्कारों को कार्य में लगाए तो छोटे छोटे संस्कार ऐसे लोप हो जाऐं मानो कि वे कभी थे ही नहीं। परन्तु आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने इन ईश्वरीय संस्कारों को स्वीकार कर लें। दूसरों को न देखें कि वे भी तो ईश्वरीय संतान हैं, वे भी तो भगवान के वारिस हैं, वे क्यों

ईश्वरीय संस्कार नहीं दिखा रहे। वे हमें सुख क्यों नहीं देते, वे हम पर करूणा क्यों नहीं करते। वे तो हमसे पुराने हैं, पहले उन्हें करना चाहिए। परन्तु याद रहे कि जो ईश्वरीय संस्कारों को धारण करेगा वही ईश्वर समान बनेगा। इसमें बड़े छोटे का कोई प्रश्न नहीं।

तो इस प्रकार हम अपने कमजोर संस्कारों को पहचान कर समय से पूर्व उन्हें बदल लें। समय हमें बदलने वाला न बने क्योंकि आने वाला प्रत्यक्षता का समय हमें दिव्य स्वरूप में भक्तों के सम्मुख पेश करेगा। यदि हम अपने ही संस्कारों के अधीन रहे तो हम इस महान जीवन में कुछ भी नहीं कर सकेंगे। हमारी साधनाएं निष्फल हो जाएगी और लोग भी हम पर हंसेगे।

हमें तो अपने संस्कारों को इतना सरल कर देना है कि हम फरिश्ते बन जाएं। पवित्रता के संस्कार से स्वयं को इतना दिव्य बना देना है कि भक्त हममें अपने देवों का दर्शन करें। ईश्वरीय दातापन के संस्कार भरकर हमें तो कोटि कोटि आत्माओं की मनोकामनाएं पूर्ण करनी हैं तो अपने से पूछें हम कहां है व क्या कर रहे हैं।

"राजयोग के प्रयोग-एक तपस्या"

किसी भी सिद्धान्त की सत्यता उसके प्रयोग द्वारा ही की जा सकती है। जब सिद्धान्त प्रयोगशाला में खरा उतरता है तो अति प्रसन्नता होती है। उस सिद्धान्त के प्रति विश्वास बढ़ जाता है और उसके महत्व का सम्पूर्ण आभास होने से बार–बार उसके प्रयोग को मन चाहता है। तपस्या वर्ष के पूर्व ही हमें ईश्वरीय प्रेरणा मिली कि इस काल में योग के प्रयोग करो। योगी तो हो, प्रयोगी भी बनो। कुछ अनुभव–युक्त प्रयोग यहां प्रस्तुत हैं।

आलौकिक सिद्धान्तों के व योग–शक्ति के प्रयोग करने की प्रयोगशाला है हमारा जीवन व जीवन क्षेत्र। अर्थात् जीवन में हमारे सम्बन्ध सम्पर्क में आने वाले साथी। वर्तमान समय में सभी का जीवन समस्याओं के चक्रव्यूह से घिरता जा रहा है, कर्मक्षेत्र पर मिली असफलताएं जीवन के प्रति उदासीनता पैदा कर रही है, तनाव व चिन्ताएं तो मानो कलियुग की सौगात ही हों। आपसी सम्बन्धों में बढ़ती कडुवाहट, ईर्ष्या, द्वेष, वैर व घृणा घर घर में व प्रत्येक संगठन में अनेक कठिनाइयां पैदा कर रही हैं। इतना ही नहीं, कालचक्र ज्यों

ज्यों तेजी से घूम रहा है, भटकती हुई भूतप्रेत आत्माओं का प्रकोप भी बढ़ रहा हैं इन सबके लिए हम योग–शक्ति का प्रयोग कर सकते हैं।

हम यहां कुछ बातें प्रयोग के लिए लिख हे हैं। इनके प्रयोग से हम अपने जीवन की प्रत्येक मुश्किलातों को सरल बना सकते हैं। ये क्योंकि स्वयं ही एक तपस्या भी है, इसलिए इस प्रकार प्रयोग करके हम तीव्र पुरुषार्थी अथवा महान योगी भी बन सकते है।

हम जानते है कि भारतवर्ष में कोई भी शुभ कार्य या बड़ा कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व स्वास्तिक बनाकर पूजा करने की रस्म है और यही मान्यता है कि इस तरह कार्य प्रारम्भ करने स कार्य में सहज ही सफलता प्राप्त होगी। यह अलग बात है कि आज तो लोग ऐसा पूजन करने के उपरान्त भी अपने खातों में ही गलत कार्य करते है।

वास्तव में स्वास्तिक का अर्थ "स्वस्थिति"। और इस रस्म का अर्थ है कि किसी भी कार्य से पूर्व यदि स्वस्थिति में अर्थात योग–युक्त स्थिति में स्थित हो जाए तो वह कार्य सहज ही पूर्ण हो जाएगा। उसमें आने वाले विघ्न भी समाप्त हो जाएगे। जो कार्य एक घण्टे में होने वाला है, वह पौने घण्टे में ही पूर्ण हो जाएगां

अब हम इसका प्रयोग करें। सारा दिन जो भी कार्य हम करने वाले होते हैं, उनसे पूर्व कुछ क्षणों के लिए हम योग–युक्त हुआ करे और इस प्रभाव कार्य पर देखें। प्रत्येक मनुष्य को सारे दिन में कम से कम १० प्रकार के कार्य तो करने ही होते हैं तो आप नियम बना लें कि प्रत्येक कर्म की शुरुआत हम योग–युक्त होकर ही करेंगे।

एक सेवाधारी का जीवन बड़ा ही व्यस्त था। उसकी सदा ही शिकायत थी कि अति व्यस्तता के कारण मैं योग नहीं कर सकता और काम–काज में समस्याएं भी बहुत आती थी परन्तु उसे यही प्रयोग बताया गया, अब उसे काम वही है, परन्तु वह प्रसन्न हे, उसके पास समय है और वह अपने योग–युक्त जीवन से पूर्ण सन्तुष्ट है। तो यदि आपको किसी कर्म में बहुत कठिनाई आती हों, लोगों का सहयोग न मिलता हो तो उससे पूर्व ३ मिनट योग कर लो और परिणाम देखो।

ईश्वरीय महाकाव्य हैं कि "स्वस्थिति से परिस्थितियों को बदलो। यदि प्रभाव मनुष्य की स्थिति पर प्रतिकूल पड़ता है। मनुष्य परिस्थितियों में बहा चला जाता है, परिस्थितियां मन को अपने अधीन कर लेती हैं, मन इन्ही उलझनों में उलझ जाता है कि अब क्या करूं..... ऐसे करूं या ऐसे करूं? और यदि परिस्थिति विकट हैं तो मन परेशान होकर कहने लगता है..... ये भी क्या जीवन है..... इससे तो मौत भली।

परन्तु स्वस्थित का प्रभाव भी परिस्थितियों पर पड़ता है। वास्तव में यह कहना ही सत्य होगा कि हमारे कमजोर संकल्प ही विपरीत परिस्थितियों का निर्माण करते हैं। परिस्थिति आने पर यदि मन और ही अधिक व्यर्थ संकल्पों में उलझ जाए तो परिस्थितियां अवश्य ही विघटन बन जाएगी।

तो ऐसे समय स्वस्थित से परिस्थितियों को बदलने का प्रयोग करें। योग–युक्त हो जाएं, संकल्प कम से कम चलाएं.... "बाबा जिम्मेदार हैं, सर्वशक्तिमान हमारे साथ है"– इस स्मृति में स्थित हो जाए और देखें कि ये श्रेष्ठ स्मृतियों परिस्थितियों को कैसे बदलती है।

यदि आपका जीवन विघ्नों से घिरा है या अचानक ही किसी गम्भीर विघ्न ने आपको आ घेरा तो आप स्वयं को विघ्न के वश न होने दो, बल्कि "मैं विघ्न विनाशक हूँ"– इस स्मृति और नशे में स्थित हो जाओ। विचार करो, मैं भगवान का बच्चा विघ्न विनाशक हूँ। मुझे तो दूसरों के भी विघ्न नष्ट करने का वरदान प्राप्त है। मन्दिरों में मेरी मूर्ति के दर्शन करने मात्र से ही भक्तों के विघ्न नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार अपने शक्ति स्वरूप में स्थित हो जाओ और देखो कि विघ्न कैसे समाप्त होते है।

यदि कोई बड़ा विघ्न आपके जीवन से जुड़ गया है तो प्रतिदिन अमृत वेले "मैं विघ्न विनाशक आत्मा हूँ"– इस स्वरूप में स्वयं को स्थित करो और २१ दिन तक प्रतिदिन एक घण्टा शक्तिशाली योग करो। परन्तु यह योग एक ही स्थान पर व एक ही समय होना चाहिए। इस प्रयोग से निश्चित ही आप विघ्नों से मुक्त हो जाएंगे। आवश्यकता इस बात की है कि आपको स्वयं में पूर्ण विश्वास रहे.... ईश्वरीय शक्तियों में पूर्ण विश्वास रहे व आप स्वयं को विघ्नों में उलझा न दें।

ईश्वरीय महाकाव्य है–"शक्तिशाली आत्मा अपनी श्रेष्ठ वृत्ति से व शक्तिशाली वृत्ति से किसी भी वातावरण को बदल सकती है। तो यदि आप देखें कि कोई व्यक्ति आपके लिए वातावरण बिगाड़ रहा है या कहीं पर किसी भी कारण अशान्ति व्याप्त है या कहीं तनाव का वातावरण है तो आप अपने शुद्ध वायब्रेशन्स फैलाकर या शान्ति के वायब्रेशन्स फैलाकर उस वातावरण को ठीक करने का प्रयोग करें।

इसके लिए पहले स्वयं को स्वमान में स्थित कर दो कि "मैं एक शक्तिशाली आत्मा हूँ, मैं विश्व परिवर्तक हूँ, और फिर योग–युक्त होकर उस स्थान पर वायब्रेशन्स दो। निःसन्देह कुछ ही समय में वहां का वातावरण बदल जाएगा। ऐसे प्रयोग आप अपने घर में भी कर सकते हैं व दूर के स्थान पर भी ऐसा प्रभाव डाल सकते हैं। इससे स्वयं में आत्म–विश्वास बढ़ेगा और अपने श्रेष्ठ कर्तव्यों की स्मृति व स्वयं की समर्थी का आभास स्वयं को बहुत ही शक्तिशाली बनाएगा।

आप यदि किसी व्यक्ति को कोई अच्छी बात समझाना चाहते हैं, परन्तु वह आपकी बात नहीं सुनता या आप किसी के विचारों में परिवर्तन चाहते हैं। आपके अपने ही सम्बन्धी आपके मार्ग में बाधक हैं, उन्हें आप अच्छी बात कहना चाहते हैं या कार्यक्षेत्र पर आपका कोई साथी या अधिकारी आपसे रूष्ट है, उन्हें आप कुछ कहना चाहते हैं तो अमृतवेले उन रुहों से रुह–रिहान करो।

उन आत्माओं के प्रति शुभ भावनाएं रखते हुए यह भी देखो कि हमारी शुभ भावनाओं का दूसरों पर क्या प्रभाव पड़ता है। परन्तु ध्यान यह रहे कि हमारी शुभ भावनाओं में थोड़ी सी भी घृणा–भाव समायी हुई न हो।

तो अमृतवेले योग–युक्त होकर उन रुहों को उनके सम्पूर्ण स्वरूप में अपने सामने प्रकट करो और उनसे वैसे ही बातें करो जैसे कि वे सामने हों। उन्हें अच्छे व श्रेष्ठ संकल्प दो। यह रुह–रिहान प्रतिदिन उसी सयम कम से कम १५ दिन करनी चाहिए। निःसन्देह उनके विचारों में परिवर्तन आएगा। ऐसे भी प्रयोग हम कर सकते हैं। परन्तु हमारे संकल्पों का प्रभाव दूसरों पर उतना ही पड़ेगा जितना हमारे अन्दर योग–बल होगा।

ईश्वरीय महाकाव्य है– "जो आत्मा अपने मास्टर सर्वशक्तिमान के टाइटिल के

नशे में रहते हैं वे अपनी संकल्प शक्ति से जो चाहे वह कर सकते हैं। यह अति श्रेष्ठ अभ्यास है। हम विभिन्न समय पर इसका प्रयोग करें।

लम्बा समय व दिन में कई बार हम इस महान सत्य को स्वीकार करें कि सर्वशक्तिमान बाप ने मुझे सर्वशक्तियां वरदान के रूप में दे दी हैं, मैं मास्टर सर्वशक्तिमान आत्मा हूँ। मेरे पास सर्वशक्तिवान जैसी ही शक्तियां हैं.... मैं अत्यन्त शक्तिशाली हूँ। इस स्मृति से सहज ही हम व्यर्थ संकल्पों से मुक्त रहेंगे और हमें संकल्पों की सिद्धि प्राप्त होगी।

यदि अचानक ही हमें केवल संकल्प द्वारा ही कोई कार्य करना या कराना हो तो अपने मास्टर सर्वशक्तिवान के नशे वे स्मृति में स्थित होकर इस संकल्प का प्रयोग करें। इससे प्राप्त सफलता हमारे सभी कार्यो को सहज कर देगी।

हमारी भावनाओं का दूसरों पर क्या प्रभाव पड़ता है–इसके हम विभिन्न प्रयोग करें। मान लो क़िसी व्यक्ति के प्रति हमारी यह भावना है कि "यह व्यक्ति अच्छा नहीं है" – इस भावना का उस पर क्या प्रभाव पड़ता है, इस भावना का हमारे सम्बन्धों पर क्या प्रभाव पड़ता है। और उसी व्यक्ति के प्रति यदि हम यह भावना रखते हैं कि वास्तव में तो यह व्यक्ति अच्छा है, भगवान का बच्चा है, पर अब यह माया के वश हैं। एक दिन अवश्य ही इसका कल्याण होगा, तो हमारी इस स्नेह की भावना का उस पर क्या प्रभाव पड़ता है यह हम देखें।

सदा ही किसी व्यक्ति के लिए हमारे मन में यही भावना है कि वह हमारा विरोधी है, यह हमारा शत्रु है....इसका क्या उल्टा प्रभाव होता है? व यदि इसी व्यक्ति के लिए हमारी भावनाएं बदल जाए कि नहीं यह तो हमें सावधान रखने वाला हैं, यह निन्दक नहीं हमारा सुधारक है.... यह विरोधी नहीं हमें शक्तिशाली बनाने वाला है। हमने भी कभी इसका विरोध किया होगा– यह अब हिसाब चुक्ता कर रहा है। तो इस प्रकार हमारी भावनाएं बदलने से वह व्यक्ति कितनी जल्दी बदलता है–इसका प्रयोग करें।

ईश्वरीय महावाक्य है कि ..... आत्मिक भाव व आत्मिक दृष्टि रखकर ज्ञान देने से दूसरे पर गहरी छाप पड़ती है। या आत्मिक दृष्टि देते हुए यदि हम अपनी बात दूसरों को कहें तो वह सहज ही मान लेता है–इस सिद्धान्त के हम प्रयोग करें।

मान लो आपको अपने अधिकारी से छुट्टी लेनी है, परन्तु वह किसी भी कारण से नहीं दे रहा है तो आप ५ सेकेण्ड उसे आत्मिक दृष्टि देकर फिर अपनी बात कहें–वह अवश्य ही राजी हो जाएगा।

कोई व्यक्ति ज्ञान–चर्चा में आपसे व्यर्थ की वाद–विवाद कर रहा है आप स्वयं आत्मिक स्वरूप में स्थित होते हुए उसे आत्मिक दृष्टि दें। आप पायेंगे कि उसका व्यर्थ वाद करना समाप्त हो जाएगा और वह आपकी बातें सुनने को तैयार हो जाएगा। इसका प्रयोग करें।

इसी प्रकार किसी व्याधि ग्रस्त आत्मा को रोग–मुक्त करने के लिए या स्वयं की किसी विशेष बिमारी को समाप्त करने के लिए विशेष रूप से योग किया जाए परन्तु यह अभ्यास प्रतिदिन उसी समय कम से कम २१ दिन तक किया जाए। अवश्य ही उस रोग से मुक्ति हो जाएंगी।

यदि आप कोई विशेष सिद्ध चाहते हैं या किसी विशेष कार्य में सफलता चाहते हैं तो प्रतिदिन एक घण्टा शक्तिशाली योग कम से कम ३१ दिन तक करें। योग में पूर्ण एकाग्रता हो। एक ही स्थान पर व एक ही समय हो। वह कार्य अवश्य ही सिद्ध होगा। अथवा वह सिद्धि भी निःसन्देह प्राप्त होगी। इस तरह भी योग के प्रयोग किये जा सकते हैं।

हमने ये १० बातें लिखी। इनके प्रयोग से हम अपने जीवन को भी योग–युक्त बना सकते हैं, अपने व दूसरों के जीवन को निर्विघ्न भी बना सकते हैं। अपने सम्बन्धों को भी मधुर बना सकते हैं व अपने सभी कार्यों को भी सफल कर सकते हैं। यदि किसी पर किसी भटकती आत्मा का प्रभाव हो, उसे भी हम मुक्त कर सकते हैं। आवश्यकता है–तत्परता की, दृढ़ता की व स्वयं में विश्वास की। तो इस तपस्या वर्ष में इस तरह भिन्न भिन्न प्रयोग करके हमें अनुभवी मूर्त बनें ताकि हमारा जीवन योगी जीवन बन जाए और हम अपने व दूसरों के विघ्न नष्ट करने वाले बन जाएं।

मैं पन का त्याग- "सूक्ष्म तपस्या"

मुझे मैं मैं करने वाली बकरियों का झुण्ड नहीं चाहिए, मुझे तो चाहिए शेर और शेरनियाँ, जिनकी दहाड़ से ही माया मूर्छित हो जाए" ये थे प्रजापिता ब्रह्मा के हृदयोद्गार, जब उनसे किसी ने यह पूछा था कि आपके पास इतना श्रेष्ठ ज्ञान

तो याद रहे संगमयुग पर हमारी महानता त्याग में हैं, कच्चा फल स्वीकार करने में नहीं। इसलिए मैं को मारो तो माया स्वतः ही मर जाएगी।

"मैं पन हैं तो दिव्यता नहीं"

प्रत्येक मनुष्य को जीवन में कई योगताएं, गुण या शक्तियां प्राप्त हैं। उन्हें ईश्वरीय कार्य या लौकिक कार्य में लगाकर उनमें वृद्धि करना बुद्धिवान व्यक्ति का कर्तव्य है। यदि कोई मनुष्य अपनी योग्यताओं का विस्तार करना ही नहीं जानता तो उसकी योग्ताएं एक दिन अवश्य ही लुप्त हो जाती है।

परन्तु योग्यताओं के आधार पर सफलता प्राप्ति के बाद यदि किसी साधक के मन में सूक्ष्म अंश रूप में यह भावना रही कि मेरी योग्यता के कारण यह सफलता है तो यह उसकी भूल होगी। ऐसा "मैं पन" का भाव रहने से धारणाओं में दिव्यता नहीं आती। मैंनें पुरुषार्थ करके ये धारणाएं बनाई है, ये कलाएं अर्जित की हैं– यह भाव भी सूक्ष्म अहं को जन्म देकर राजयोगी के सम्पूर्णता के मार्ग में सूक्ष्म बाधा बन जाती है।

यदि कोई श्रेष्ठ साधक, श्रेष्ठ योगी, अतीत में झांक कर देखे कि जो कुछ भी वह बना, जो भी श्रेष्ठ स्थिति उसने पाई, जो भी सफलता उसे सेवा के क्षेत्र में मिली क्या वह ईश्वरीय सहयोग या ईश्वरीय प्ररेणाओं के बिना सम्भव न थी। तो उसका अन्तर्मन उसे जवाब देगा कि यह तुम्हारी विशेषताएं नहीं, ये केवल तुम्हारी मेहनत का परिणाम नहीं बल्कि ईश्वरीय वरदान हैं। तो अपनी योग्यताओं को ईश्वरीय देन समझकर चलेंगे तो जीवन में दिव्यता का प्रकाश चमक उठेगा।

"पुण्य फल को नष्ट करता है-मैं पन"

श्रेष्ठ कर्मो में या पुण्य कर्मो में यदि करने वाले के मन में "मैंने किया"–ऐसी भावना है तो उसका आधा पुण्य नष्ट हो जाता है। धन का करे–तो उसका सम्पूर्ण पुण्य नष्ट हो जाता है। यदि कोई वर्णन तो न करे परन्तु मन मे यह नशा रखे कि मैनें इतना किया तो उसका आधा पुण्य नष्ट हो जाता हैं। यदि सहयोग देकर कोई व्यक्ति सम्मान की कामना करे तो भी उसका पुण्य नष्ट हो जाता है। गुप्त सहयोग देना, सहयोग देकर भूल जाना–इससे ही पुण्य फल

प्राप्त होता है।

तब ही तो गीता में कहा कि जो मनुष्य यह कहता है कि मैं यज्ञ करूंगा, मैं इतने को भोजन कराऊंगा, मैं ये ये पुण्य करूंगा.... मैंने ये ये श्रेष्ठ कार्य किया– ये कर्म भी रजोप्रधान कर्म हैं। क्योंकि इनमें श्रेष्ठ कर्म करने वाले ने "मैं पन" का त्याग नहीं किया।

हमें पुण्य की पूंजी बढ़ानी है। पुण्य का बल मनुष्य को आपदाओं के समय मद्द करता है। इस सर्वश्रेष्ठ संगम युग पर हमें अत्यन्त स्वर्ण अवसर मिला है ताकि हम जन्म जन्म के लिए पुण्य की पूंजी जमा कर लें। तो जो ईश्वरीय ज्ञान से सम्पन्न बुद्धिमान रहे हैं उन्हें चाहिए कि श्रेष्ठ कर्मो का व पुण्य कर्मों का खाता जमा करके उस पर "मैं पन" की लाल स्याही से लेप दें। नहीं तो यह मैं पन हमें बन्धन अवश्य डालेगा।

महाभारत में अर्जुन को अपनी वीरता का गर्व कई बार सताता है। मैंने ये वीरता दिखाई–मैंने युद्ध जीता और श्री कृष्ण बार बार उसे महसूस कराते हैं। कि तुम्हारे साथ ईश्वरीय शक्ति थी, यह मेरे गाण्डीव धनुष की कमाल नहीं थी, यह तो श्री कृष्ण की कृष्णा थी।

हम भी यह समझ लें कि हमारे महान कार्य इसलिए हो रहे हैं कि हमारे साथ सर्वशक्तिवान है। यदि उसकी छत्रछाया हम से हट जाए तो हम कुछ भी न कर पाएं व हमारी सम्पूर्ण कान्ति भी लोप हो जाए।

"मैं पन रखना-सूक्ष्म पाप"

ईश्वरीय देन में, ईश्वरीय सम्पत्ति में व ईश्वरीय प्राप्तियों में मैं पन लाना सूक्ष्म पाप है। इन्हें दी है स्वयं सर्व समर्थ ने और हम समझें कि हमने मेहनत की है तो यह तो मानो पराई चीज़ को अपनी चीज कहनां है।

फिर जब हम अपना सर्वस्व स्वाह कर चुके तो हमारा कुछ भी रहा ही कहां। किसी भी व्यक्ति या पदार्थ में हम "मेरा पन" नहीं रख सकते। यदि रखते हैं तो यह सूक्ष्म पाप होगा और यह पाप बढ़ते बढ़ते हमारे सभी पुण्यों को खा जाएगा।

हमारा अपना तो कुछ भी नहीं, परन्तु प्राप्त हुई ईश्वरीय सम्पत्ति से यदि हम दूसरों को सुख नहीं देते; ईर्ष्या, वैर विरोध के कारण दूसरों को ईश्वरीय सम्पत्ति से सहयोग नहीं देते तो यह हमारे महापाप के खाते में जमा होगा और ईश्वरीय सम्पत्ति का सुख हमें भी प्राप्त नहीं हो सकेगा। इसलिए हम यह न भूलें कि ईश्वरीय खजाने दूसरों को सुख देने के लिए हैं न कि केवल इक्ट्ठे करने लिए या स्वयं के सुखों के लिए।

इस तपस्या काल में स्वयं को दिव्य बनाना, सूक्ष्म बन्धनों को काट देना व निर्विघ्न बनकर चलना हमारा लक्ष्य है। तो योग तपस्या के साथ साथ मैं पन के त्याग की सूक्ष्म तपस्या भी हमें करनी है। ऐसा न हो हम महान योगी तो बन जाएं परन्तु "मैं पन" का त्याग न कर पायें। इससे हमारी तपस्या का बल साथ ही साथ नष्ट होता रहेगा। आवश्यकता इस बात की है कि में यह अनुभव युक्त विश्वास हो कि करन करावनहार बाप ही हमें निमित्त बनाकर सब कुछ कर रहा है। हमने इस जीवन में पुरुषार्थ करके जो कुछ भी प्राप्त किया है वह ईश्वरीय देन है और सर्वशक्तिवान बाप प्रत्येक बात में जिम्मेदार है। **तो आओ में। पन को पहचान लें** और सर्वशक्तिवान बाप प्रत्येक बात में जिम्मेदार है। **तो आओ मैं पन को पहचान लें** और इससे मुक्त होकर बुद्धि को दिव्य करें, संगठन को सशक्त बनायें और स्वयं में पुण्य कर्मों का बल भरें।

"श्रेष्ठ स्वमान की तपस्या"

"राजीव, तुम्हारा जन्म ही महान कार्यों के लिए हुआ है, अब तुम वही करो जिसके लिए तुमने ये जन्म लिया है"– ये प्रेरक बोल राजीव के अलबेलेपन को समाप्त कर गए। उसका चिन्तन गहन हुआ और स्वमान की अनुभूति बढ़ी, कदमों ने रफ्तार पकड़ी और वह चला दिव्य अनुभूतियों की उस प्रकाश की ओर, जहां जाने पर कोई वापिस नहीं लौट सकता। राजीव ने अब समझा कि यों ही इतने वर्ष उसने पुरुषार्थ की खींचातानी अनुभव की। अब उसे यह भी एहसास हुआ कि भगवान भला कठिन साधनाओं का पथ क्यों दर्शाएगा। उसने जान लिया कि सहज ही स्वमान में टिक कर हम सम्पूर्णता के समीप पहुंच सकते हैं। क्योंकि यह स्वमान हमारी अपनी ही निधि है, हमें किसी अन्य की उपाधियों का अनुसरण नहीं करना है।

स्वमान क्या है? यह जानना कि मैं कौन–सी आत्मा हूँ। यही वह स्वमान है जिसे भारतीय दर्शकों ने छुआ तक नहीं। सभी ऋषि यह कहकर ही, कि मैं आत्मा हूँ, अपने सत्य की समाप्ति कर गये। परन्तु जब भगवान सत्य वचन सुनाने प्रस्तुत हुए तो उन्होंने आते ही याद दिलाया–तुम कौन–सी आत्मा हो, तुम कितनी शक्तियों से सुसज्जित हो और तुम्हारे क्या क्या अधिकार व महान कर्तव्य हैं।

अनेक रुहों ने अनेक स्वमान की बातें सुनी और सभी ने किसी न किसी सीमा तक स्वयं का वैसा ही स्वरूप भी बनाया। परन्तु आवश्यकता इस बात की है कि हम पूर्णतया उसको जीवन से एकीकार कर दें अर्थात हमारा जीवन ही वही हो जाए। इसके लिए ३ प्रमुख अंग है।

सर्वप्रथम हमें उस बात को स्वीकार कर लेना होता है, जो स्वयं भगवान ने हमारे लिए कही है। दूसरा, उसकी कम से कम दिन में ५ बार स्मृति रखकर स्वयं को प्रति एक दृश्य (vision) भी निर्माण करना होता है। जब तक हमारा विवेक उसे स्वीकार नहीं करता, तब तक वह बात धारणा में नहीं आएगी और न ही हम उसके नशे में ही रह पायेंगे। हमें देखना है कि कहीं हमारा विवेक उस सत्य को परावर्तित (Reflect or Reject) तो नहीं कर देता अर्थात् अस्वीकार तो नहीं कर देता। कई बार हम मोटे रूप से तो कई बातों को मान लेते हैं, परन्तु हमारा अन्तर्विवेक उसे अपने अन्दर प्रवेश नहीं होने देता। तो आवश्यकता इस सुक्ष्म बात की है कि हम अपने विवेक को मान लें कि "मैं आत्मा में हूँ", तो सारी कठिनाईयां समाप्त हो जाएगी।

उदाहरणार्थ–हमें स्वमान मिला है कि तुम "पवित्रता की देवी हो" परन्तु कलियुग के तमोप्रधान वातावरण में जन्मी व पली कोई भी योगी आत्मा इस स्वमान को स्वीकार करने में देर लगाती हैं अन्तर्विवेक इन्कार करता है कि नहीं, तुम ऐसी नहीं हो.... अभी तुम्हें ऐसा बनना है। यद्यपि मोटे रूप से तो दूसरी बात ही सत्य प्रतीत होती है, परन्तु यह भी सत्य है कि यदि हम भगवान द्वारा दिये गये टाइटिल को स्वीकार कर लें तो इसका स्वरूप बनने में हमें देर नहीं लगेगी।

दिनोंदिन हमारे स्वमान सूक्ष्म रूप लेता चले। "मैं पवित्रता की देवी हूँ– यह

नशा सूक्ष्म हो अर्थात् अब हमारा यह चिन्तन व अभ्यास हो कि जबकि मैं पवित्रता की देवी हूँ तो मुझे कलियुग की, यहां के तामसिक मनुष्यों की, यहां के तमोप्रधान वायब्रेशन की अपवित्रता छू भी नहीं सकती। वो मुझसे टकराकर वापिस हो जाएगी। जो भी मुझे देखेगा, पवित्रता की प्रेरणा ले जाएगा। मैं अपनी दृष्टि व संकल्प से सभी को पवित्रता का बल दूंगी, उनकी आसुरी वृत्तियों को नष्ट करूंगी।

एक अनुपम अभ्यास

आप स्वमान के पॉइन्टस की एक लिस्ट बनायें। उसमें १० या १५ पॉइन्टस हों। और योग–युक्त होकर स्वयं से यह पूछें कि इनमें से मुझे कौन–सी बात बहुत प्रिय लगती है, जिसे सुनते ही मैं फ्रैश हो जाती हूँ या जिसे सुनते ही मुझे बहुत नशा चढ़ जाता है व मेरी थकान व सुस्ती भी मिट जाती है।

अब आप जरा सोचें कि आपको यह बात क्यों अति प्रिय है? क्या आप बताएंगे. .. पुनः विचार करें....

वह स्वमान की बात आपको इसलिए भाती है कि कल्प पहले आप उसी बात का स्वरूप बने थे। हमें याद रहे कि हमें जो कुछ भी प्रिय लगता है, उससे हम अनेक बार के जुड़े रहे हैं। अब यदि उसी स्वमान की पॉइन्ट को लेकर आप १५ दिन सच्चे दिल से अभ्यास करें तो आपको अद्‌भूत अनुभव होंगे और आप उसी स्वमान का स्वरूप बन जाएगे। इससे भी राज–युक्त तथ्य यह होगा कि प्रत्यक्षता के काल में आपकी वहीं स्थिति दूसरों को भी अनेक अनुभव करायेगी और भक्त आपको उसी स्वरूप में देखेंगे और भक्तिकाल में भी वही स्वमान आपकी पूज्य स्थिति का आधार बनेगा।

यहां दृष्टान्त के लिए ५ स्वमान की बातें लिख रहे हैं। आप देखें, उनमें से आपको कौन सी अति प्रिय हैं।

१. मैं दाता व वरदाता हूँ
२. मैं प्रकृति का मालिक हूँ
३. मैं मास्टर सर्वशक्तिवान हूँ
४. मैं साक्षात्कार मूर्त हूँ, इष्ट देव हूँ

५. मैं पवित्रता की देवी या देवता हूँ

इसके अतिरिक्त अन्य भी कुछ महत्वपूर्ण पॉइन्टस हो सकते हैं। जैसे मैं विश्व कल्याणकारी हूँ, मैं विजयी रत्न हूँ, मैं मास्टर मुक्ति व जीवनमुक्ति दाता हूँ। मैं विघ्न विनाशक हूँ, मैं मास्टर भाग्य विधाता हूँ.... आदि आदि।

मान लीजिए आपको अति प्रिय लगा कि "मैं प्रकृति का मालिक हूँ–हम यहां एक चिन्तन प्रस्तुत कर रहे हैं जिसके आधार पर आप इस स्वमान की साकार प्रतिमूर्ति बन सकते हैं।

सर्वप्रथम हम पुनः पुनः अपनी बुद्धि को यह संकल्प स्वीकार कराएं कि मैं प्रकृति का मालिक हूँ। यदि हमारा विवेक कहे, नहीं, प्रकृति का मालिक तो भगवान है (क्योंकि यह बुद्धि ने पूर्व में स्वयं में विवेक भरा था।) तो आप पुनः यह संकल्प भरो नहीं भगवान ने स्वयं तुम्हें कहा है कि मेरे योगी व अधिकारी बच्चे होने के कारण तुम भी प्रकृति के मालिक हो। बार बार यह संकल्प अपने विवेक में भरते रहो। जल्दी ही विवेक इसे पूर्ण रूपेण स्वीकार कर लेगा।

साथ साथ दिन में कम से कम ५ बार इसको याद करके इसके नशे में स्थित हो जाओ।

अब अभ्यास करो-

मैं आत्मा राजा, भ्रकुटि सिंहासन पर विराजमान हूँ.... मैं इस देह का, इन कर्मइन्द्रियों का मालिक हूँ, मन–बुद्धि का मालिक हूँ।

चिन्तन करो

जबकि मैं देह का मालिक हूँ तो यह देह मुझे आकर्षित नहीं कर सकती। जबकि मैं इन कर्मइन्द्रियों का मालिक हूँ तो ये कर्मइन्द्रियां मुझे अधीन नहीं कर सकती। जबकि मैं मन–बुद्धि का राजा हूँ तो ये मेरी आज्ञा के बिना कहीं भी नही जा सकती।

मैं इस प्रकृति द्वारा निर्मित देह का मालिक हूँ। मैं सम्पूर्ण प्रकृति का मालिक हूँ। मेरी प्रजा अब तमोप्रधान बन गई हैं। मुझे इसे पवित्र बनाना है, इसकी सेवा करनी है, तब ही तो ये तत्व मुझे अपना मालिक मानकर मेरी सेवा करेंगे।

मैं इन सभी तत्वों का मालिक हूँ..... अब ये मेरे आदेशों का पालन भी करेंगे. .... मेरा आदेश मिलते ही अग्नि प्रकट हो जाएगी.....

जल प्रकट हो जाऐगा... वर्षा हो जाएगी.... सागर शान्त हो जाऐगा, प्राकृतिक प्रकोप शान्त हो जाएँगे, तूफान रुक जाएगा.....।

परन्तु यह कब होगा? तब जबकि मैं प्रकृति का मालिक बनूंगा, जबकि इन तत्वों ने मुझे अपना मालिक स्वीकार किया होगा। तब ये तत्व मेरी सुरक्षा भी करेंगे व मुझे सब कुछ प्रदान भी करेंगे।

अब एक दृश्य बनाओ.....

मैं योग–युक्त होकर विराजमान हूँ.... मेरे सामने प्रकृति के पांचों तत्व चेतन राजाओं के रूप में हाथ जोड़े खड़े हैं। मेरे अंग से पवित्रता की किरणें फैल रही है। पाँचों तत्व उन्हें ग्रहण करके पवित्र हो रहे हैं।

कभी यह अभ्यास करें कि मुझमें वायब्रेशनस निकलकर सम्पूर्ण पृथ्वी में समा रहे हैं, कभी सम्पूर्ण आकाश में फैल रहे हैं..... आदि।

तब यह अनुभव होगा कि प्रकृति के पांचों तत्व हाथ में मालाएं लेकर अपने मालिकों का स्वागत करने के लिए खड़े हें। इस प्रकार यह स्थिति हैं इस स्वमान की, कि मैं प्रकृति का मालिक हूँ। यह स्थिति विनाशकाल में बहुत काम आएगी।

इसी प्रकार अति संक्षेप में हम दूसरी बात भी ले रहे हैं। मान लो आपके मन को भाया कि मैं साक्षात्कार मूर्त हूँ।

इसका चिन्तन इस प्रकार करो कि प्रत्यक्ष का वह समय अति समीप है जबकि सभी भक्त अपने अपने इष्ट देव देवियों से मिलकर अपनी जन्म जन्म की भक्ति का फल प्राप्त करेंगे। और उनके इष्ट हम ही हैं। जैसे हमने भगवान से मिलकर अनेक प्रकार के सुख व सन्तुष्टि प्राप्त की, वैसे ही हमारे भक्त हमसे मिलकर प्राप्त करेंगे।

अब भक्त हमारा आह्वान कर रहे हैं, उस समय की इन्तजार कर रहे हैं तो हम जल्दी जल्दी अपनी स्वमान में स्थित होकर भक्तों की इंतजार पूर्ण करें।

अब एक दृश्य का निर्माण करें.....

कि हमारे सामने हमारे भक्त खड़े हैं। यह संकल्प करो कि मैं इनका इष्ट देव विष्णु हूँ..... मैं जग का मास्टर पालन कर्ता हूँ.... मेरे अंग अंग से दिव्य सुनहरा प्रकाश निकल रहा है.... मेरे सिर पर डबल ताज है..... मैं चतुर्भज हूँ.... शंख, चक्र, गदा, कमलधारीं हूँ।

भक्त मेरे इस स्वरूप का साक्षात्कार करके आनन्दित हो रहे हैं, पुष्प चढ़ा रहे हैं.... तृप्त हो रहे हैं....।

इस प्रकार प्रतिदिन एक बार यह अभ्यास करने से हमें स्वयं को ही अनुभव होने लगेगा कि जैसे ही हम यह संकल्प करेंगे कि मैं विष्णु स्वरूप हूँ, हम उस स्वरूप में स्थित हो जायेंगे। यही स्वमान की स्थिति प्रत्यक्षता के काल में जयजयकार के नारे लगाने का आधार बनेगी।

स्वमान की स्थिति हमारे पुरुषार्थ को सरल करके सहज ही हमें सम्पूर्णता की ओर अग्रसर करती है, वास्तव में स्वमान में स्थित होना ही सम्पूर्णता है। स्वमान से होने वाले मुख्य लाभ इस प्रकार हैं–

स्वमान अभिमान को मिटाता है-

अहं को नष्ट करना हमारी साधनाओं का परम ध्येय है। यदि साधक अभिमान से मुक्त नहीं होता तो उसकी साधनाओं का बल भी नष्ट होता जाता है और उसमें अलौकिकता व दिव्यता के दर्शन भी नहीं होते। स्वमान में स्थित होना, अभिमान नहीं है, यह शुद्ध नशा है। और ज्यों ज्यों स्वमान की स्थिति बढ़ेगी त्यों त्यों अभिमान स्वतः ही कम होता जाएगा। सत्य तो यह है कि स्वमान ही मनुष्य को उसके अभिमान का एहसास कराता है। बिना स्वमान में स्थित होकर दूसरों से बात करेंगे तो उनका भी अभिमान नष्ट होता नजर आयेगा। एक बहुत बड़ा विद्वान, जो अपने अहं वश किसी सत्य को स्वीकार करने के लिए तैयार ही नहीं होता, हमारे स्वमान के आगे स्वयं को अल्पज्ञ अनुभव करेगा।

स्वमान महान विचारों का निर्माण करता है

महान विचार महान आत्माओ के श्रृंगार हैं। यदि विचारों में विशालता नहीं तो

महान लक्ष्य को पाने के लिए बल पूर्वक कदम बढायें।

एक के बाद एक आने वाली विपत्ति वीर पुरुष को भी उदास कर देती है। संसार में बढ़ते हुए तनाव से टकराते ज्ञानियों के ज्ञान–कोष भी रिक्त हो जाते हैं, घर–घर में बढ़ते मन मुटाव व स्नेह और विश्वास की कमी योगियों को भी चिन्तित कर देती है। परन्तु शक्तिशाली वही है जो विपरीत वातावरण व विपरीत परिस्थितियों में भी अपनी श्रेष्ठ स्थिति को स्थिर रख सके और अपने सभी कार्य समय से पूर्व ही पूर्ण कर ले। आज ऊपर, कल नीचे अभी अभी खुशी, अभी अभी गम, कभी जीत, कभी हार, कभी निराशा, कभी आशा–ये शक्तिशाली व्यक्ति के लक्ष्ण नहीं।

क्रोधी व्यक्ति निर्बल है, रोब दिखाने वाला रोगी है। विश्व पर शक्तिशाली आत्मा ही राज्य करेगी। संसार को समर्थ व्यक्ति ही झुकायेगे।

परन्तु जो व्यक्ति व्यसानों के अधीन हो, जो योगी मन के कमजोर संकल्प के ही वश हो, जो ज्ञानी, विड़चिड़ेपन, व्यर्थ बोल व आलस्य पर भी विजय न कर पाया हो, वह विश्व विजयी होने के स्वप्न भी नहीं देख सकता। शक्तिशाली वही है जो व्यर्थ व छोटे छोटे संकल्पों से एक सेकेण्ड में मुक्त होकर अशरीर हो जाए।

ज्यों ज्यों विश्व अपनी अन्तिम घड़ियों के दिन गिन रहा है, ज्यों–ज्यों विश्व गगन में काले मेघों की कालिमा बढ़ती जा ही है, ज्यों ज्यों वसुन्धरा पर मार–काट की लीला नये नये नृत्य कर रही है, त्यों त्यों प्रत्येक प्राणी के मन में भय घर करता जा रहा है। और वे दिन दूर नहीं जबकि इस धरा पर प्रत्येक मनुष्य अनिश्चितता का जीवन जियेंगा, जबकि प्रत्येक मनुष्य मौत के भय से पहले ही मर चुका होगा। जबकि भय के वातावरण में मनुष्य चैन की नींद भी नहीं सो पायेगा।

ऐसे में भय से तुरन्त आत्माएं शक्तिशाली योगियों के पास शरण लेने आयेंगी और वे पावन योगी उनके रक्षक बन जाऐंगे। उनके शक्तिशाली वाइब्रेशन में वे निर्भय, निश्चित व खुशी का अनुभव करेंगे परन्तु यदि योगी स्वयं ही भयभीत हुए, यदि वे स्वयं ही अपनी शक्तियों को और अपने वरदानों को भूल गये तो असहाय आत्माओ की कैसी दुर्दशा होगी।

माया के भयंकर युद्ध में विजयी बनने के लिए भी ब्रह्मा वत्सो को शक्तिशाली बनाना पड़ेगा। इतने समर्थ बने जो माया पास आने का साहस भी न कर पाये। इतने शक्तिशाली जिनकी उपस्थिति से ही अनेको में बल भर जाए। यदि हम ऐसा न कर पाये तो माया की जीत माया के होंसले बुलन्द कर देगी और प्रभु–वत्सों को जीत के लिए बहुत समय लग जाऐगा।

तो इस तपस्या वर्ष में स्वयं को इतना शक्तिशाली बना ले ताकि हम अपने वाइब्रेशन्सन से अशान्त व तनाव–युक्त वातावरण को भी बदल सकें। हम स्वयं में इतना बल भर लें। जो हमारा बल निर्बलों का सहारा बन जाए। हम स्वयं को इतना शक्ति संपन्न बनाये ताकि हम जो भी श्रेष्ठ कर्म या श्रेष्ठ पुरुषार्थ करना चाहें वह कर सकें। हम सर्वशक्तिवान जैसे सर्वशक्तियों से भरपूर बन जाएं ताकि विनाश के समय की विभिन्न चुनौतियों का डटकर मुकाबला कर सकें। चाहे शारीरिक पेपर हमें देने पड़े या गन्दे वातावरण में रहना पड़े, किसी भूत–प्रेत का सामना करना पड़े या अकल्पनीय परिस्थितियों से गुजरना पड़े, हम पूरी तरह सफल हों और पास विद ऑवर का सर्टिफिकेट प्राप्त कर लें।

यही सम्पूर्ण सत्य है कि सर्वशक्तिवान बाप से योग–लगाने से आत्मा में शक्तियां आती है। शक्तिशाली बनने का अर्थ ही है। मानव बुद्धि व बुद्धि को शक्तिशाली बनाना। परन्तु यदि योग लगाते लगाते भी किसी का मन निर्बल ही रह गया हो, उसका मनोबल न बढ़ा हो, स्वयं में आत्म–विश्वास न जगा हो, तो अवश्य ही कहीं कुछ गलती हो रही है।

कई योगी अमृत–वेले अतिशीघ्र जगकर योग–अभ्यास करते हैं, परन्तु कर्मक्षेत्र पर आते ही वे चिड़चिड़े हो जाते हैं या उनकी दृष्टि इधर–उधर जाने लगती है या वे किसी से टक्कर लेने लगत हैं या फिर अवगुण दर्शन पर दर्शन व परचिन्तन करते रहते हैं–इन सबसे उनकी शक्तियां क्षीण हो जाती है और सूर्य ढलते ढलते वे अपने सारे को खाली कर देते हैं और फलस्वरूप वे सदा ही महसूस करते हैं कि अमृत वेले शक्तिशाली योग करने के उपरान्त भी वे अपने जीवन में सफल व सन्तुष्ट नहीं है।

तो एक योगी को शक्तिशाली बनने के लिए अपने उन सभी मार्गों को बन्द कर देना चाहिए जिनसे आत्मा की सूक्ष्म शक्तियाँ नष्ट होती है। स्वयं की बुद्धि को

डिस्टर्ब करना, स्वयं व्यर्थ या साधारण विचारों में रहना बुद्धि व ध्यान का अनावश्यक रूप से इधर–उधर भटकना, व्यर्थ चिन्ताओं में रहना, क्रोध को वश में करना, व्यर्थ बोलना, सूक्ष्म इच्छाएं रखना व सूक्ष्म विकर्म करना–इनसे शक्तियां नष्ट होती हैं। तो ऐसा न हो कि एक ओर हम शक्तियां प्राप्त करने क लिए योग की धुन लगाये रक्खें और दूसरी ओर हमें पता भी न चले कि शक्तियां बहकर नष्ट हो रही है।

शक्तिशाली कैसे बनें.....?

शक्तियां मुख्य रूप से प्राप्त होती है.....

पवित्रता से .... पवित्र आत्मा विश्व की ओर सबसे शक्तिशाली आत्मा होती है पवित्रता बहुत बड़ा बल है। पवित्र आत्माओं को अपने बल की स्मृति सदा रहनी चाहिए। ईश्वरीय महावाक्य हैं कि, "पवित्रता के बल से तुम जो चाहे कर सकते हो।"

मनन से..... ज्ञान का यदि मनन किया जाता है तो ज्ञान एक विशाल बल बन जाता है। परन्तु ज्ञान मंथन का अभाव ज्ञान होते हुए भी आत्मा को निर्बल होने का एहसास कराता है।

एकाग्रता से–मन बुद्धि को एकाग्र करने से इनकी शक्तियां बढ़ जाती है क्योंकि एकाग्र होने से मन साधारण व व्यर्थ संकल्पों में शक्तियां नष्ट नहीं करता।

योग–अभ्यास से.... सर्वशक्तिवान से योग लगाने से आत्मा में इतनी शक्तियां आ जाती है कि एक दिन वह बाप समान शक्ति–सम्पन्न आत्मा बन जाती है। तो निरन्तर सर्वशक्तिवान से अष्ठ शक्तियों की रंग बिरंगी किरणें लेते रहें।

जैसी स्मृति वैसी समर्थी... यदि कोई व्यक्ति स्वयं को कमजोर ही समझता रहे सदा यह ही कहता रहे कि मैं तो यह काम नहीं कर सकता, तो वह कमजोर ही बना रहेगा। परन्तु शारीरिक दृष्टि से कमजोर व्यक्ति भी यदि यह सोचता है कि मुझे यह काम करना ही है तो उसमें बल आ जाता है। अर्थात् हमारी स्मृति हममे समर्थी लाती है।

स्वयं में आत्म विश्वास जागर्ये-

कई शक्तिशाली व्यक्ति आत्म विश्वास की कमी के कारण निर्बल बने रहते हैं। परन्तु शक्तियां तो पवित्र आत्माओं में समाई हुई हैं। अपनी शक्तियों को पहचानना, उन्हें जगाकर कार्य में लगाना आवश्यक हैं। स्मृति स्वरूप होकर रहने से सुषुप्त शक्तियां जग जाती है। तो हमें स्वयं में विश्वास बढ़ाना है...

कि हम अवश्य सफल होंगे.... हम नहीं करेंगे तो और कौन करेगा, कल्प पहले भी तो हमने ही विजय पाई है, हमारा सार्थी भगवान है, हम वह कार्य करके ही छोड़ेंगे.... हमें आगे बढ़ने से कोई भी रोक नहीं सकेगा, हम माया को मूर्छित कर देंगे, हम माला में आकर ही दिखायेगे....हम विद्वानों को ठुकराकर आगे बढ़ते ही जाएगे। तो अनुभव होगा कि आत्म–विश्वास का बल जीवन का मार्ग किस तरह सुगम बना देता है।

इसके विपरीत निराशा के विचार जगी हुई शक्तियों को भी सुला देती हैं। आपने कई अच्छे योगी देखे होंगे जो महान कार्य करने का साहस ही नहीं करते। कार्य मिलने पर जब वे 'ना' कर देते हैं वे फलतः उनकी शक्तियां पुनः सो जाती है, जबकि सदा ही हां करने वाला व्यक्ति शक्तियों का संग्रह कर लेता है।

हमें स्वयं में विश्वास रहे कि जबसे हम सर्वशक्तिवान बाप के बच्चे बनें उसने हमें सर्वशक्तियों का वरदान दे दिया। अर्थात् सारी शक्तियां हमारे पास ही हैं। हम स्वयं का कभी भी कमजोर न समझें। हमें तो शक्तियों का आह्वान करके उनका बस प्रयोग करना है।

तो यह स्मृति रहें-

कि मैं सर्वशक्तिवान की सन्तान मास्टर सर्वशक्तिवान हूँ.....मेरे साथ स्वयं भगवान है, मेरे ऊपर उसकी छत्रछाया है। मैं सभी शक्तियों का मालिक हूँ.. ... सर्वशक्तियां मेरे चारों और प्रभामण्डल बनाये हुए हैं। वे मेरी सुरक्षा भी कर रही है व सहायता भी। जब भी मैं उनका आह्वान करूंगा, वे मेरी सहायता के लिए हाजिर हो जाएगी।

ईश्वरीय महावाक्य हैं "कि मास्टर सर्वशक्तिवान के नशे में रहने वाली आत्मा

अपनी संकल्प शक्ति से ही सब कुछ कर सकती हैं, अर्थात् उसे संकल्पों की सिद्धि प्राप्त होती है। स्पष्ट हे कि शक्तिशाली बनने के लिए केवल इस स्मृति को शक्तिशाली बनाने की आवश्यकता है।

शक्तिशाली आत्मा बनने के लिए शक्तिशाली संकल्पों की रचना करनी आवश्यक है। कमजोर विचारों को अपने मन मन्दिर में प्रवेश न होने दें। उदाहरण के लिए कुछ शक्तिशाली संकल्प यहां प्रस्तुत है। इन्हें न केवल मन में दोहराना है, बल्कि बार–बार बुद्धि में भरना है अर्थात् बुद्धि को स्वीकार करना है। संकल्पों में बड़ा भारी बल है। "जैसे जिसके संकल्प वैसे उसकी शक्तियां"...

तो इस प्रकार सोचे–

मैं एक शक्तिशाली आत्मा हूं.... मेरे साथ शिव की शक्ति हैं

मैं एक पवित्र आत्मा हूं..... पवित्र आत्मा शक्तिशाली होती है

मैने काम को ललकारा है माया को ललकारने वाले कमजोर नहीं होते।

सारी प्रकृति मेरे नियंत्रण में है.... मैं इतना शक्तिशाली हूं

मैं भगवान का बच्चा हूं.... उसने मुझे नया धर्म व राज्य स्थापित करने का बल प्रदान किया है।

सारी शक्तियां मेरी सेविकाएं है...और मेरे चारो ओर कवच के रूप में स्थित हैं।

मैंने अनेक बार विश्व पर राज्य किया..विश्व महाजन अति शक्तिशाली होता है।

भगवान मेरा छत्र है.... मैं शक्तिशाली हूं

मैं फरिश्ता हूँ.... फरिश्ते शक्तिशाली होते हैं...

मैं असुर सहारिनी दुर्गा हूँ..... मेरी दृष्टि से ही असुर भव्य हो जाते हैं....

मैने कल्प कल्प माया पर विजय पाई है, असंभव को सम्भव किया है, मेरी शक्तियों का गायन व पूजन हो रहा है।

इस प्रकार के विचार हमें अपनी शक्तियों की याद दिलायेगे और हम

2F

शक्तिशाली बनते जाएंगे।

तो आओ शक्ति सम्पन्न बनने की तपस्या करें। शक्तिशाली बनकर सर्वशक्तिवान को प्रत्यक्ष करें। मन से जन्म जन्म की निर्बलताओं को दूर कर दें। आने वाने भयानक समय की चुनौतियों को हंसते हंसते स्वीकार कर लें। हम शक्तिशाली बनने के साथ साथ धैर्यचित व विवेकशील भी बनें।

ताकि हमसे कभी भी शक्तियों का दुरुपयोग न हों। हम अपनी शक्तियों का प्रयोग दूसरों को सुख व वरदान देने में करें। हमारी शक्तियाँ निर्बलों को बल देने वाली हो। इस प्रकार शक्तिशाली आत्माएं ही सच्चे तपस्वियों के रूप में प्रख्यात होगी।

सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य-सबसे बड़ी तपस्या

१५ वर्ष की तपस्या के बाद भी सुरेश पवित्रता का आनन्द प्राप्त न कर सका। उसने मन में उठने वाला संघर्ष, झूठे प्यार की भूख, स्वप्नों की तामसिकता और संसार का आकर्षण उसके ईश्वरीय रस पाने में व्यवधान बना रहा। वह यह सोच सोच कर सन्तुष्ट रहता था कि बड़े–बड़े ऋषियों ने भी तो इस मार्ग को अत्यन्त कठिन माना है। परन्तु उसे यह पता नहीं था कि वे भगवान से अपने सत्य स्वरूप की पहचान के बाद व उसके अधिकारी वत्स बनने के बाद सम्पूर्ण तपस्या में रत हैं। जो मार्ग ऋषियों के लिए कठिन था, वह उसके लिए सुलभ है क्योंकि उसे राह दिखाने वाला स्वयं भगवान है।

परन्तु भगवान की छत्रछाया में पलकर भी यदि किसी को ब्रह्मचर्य की साधना नितान्त कठिन लगे, तो वह व्यक्ति सच्चा साधक नहीं है। अवश्य ही भगवान को पाकर भी वह आत्म–सन्तुष्टी हेतु इधर–उधर निहार रहा है, भगवान ने उसकी अंगुली पकड़ी है–शायद इसका उसे एहसास ही नहीं। अब समय पवित्रता का वरदान आया है, यह भी उसे ज्ञान नहीं।

मनुष्य के प्यार में मनुष्य भगवान से किये हुए वायदों को भूल जाता है। वह यह भी भूल जाता है कि अब मनुष्यों का प्यार उसे सन्तुष्टी नहीं देगा। मनुष्यों के प्यार में आकृषित होकर वह भगवान से भी मुंह मोड़ने की सोचने लगता है। माया की प्रबलता में उसकी आंखों पर काली पट्टी बंध जाती है और वह

बरबस बह चलता है, उसी गन्दे नाले की खोज में, जिसमें जन्म जन्म बह कर उसने कष्ट उठाये।

माया का सम्पूर्ण ज्ञान हो-

समय ज्यों ज्यों आगे बढ़ रहा है, ज्यों ज्यों विनाश के काले बादल धरती पर घेराव डालते जा रहे हैं, रावण राज्य भी अपने अन्तिम दिन गिन रहा है। परन्तु समाप्ति से पूर्व रावण अपनी पूरी सेना सहित सम्पूर्ण बल पूर्व आक्रमण करता है–इस बात का सम्पूर्ण बोध अब योगियों को होना चाहिए। अर्थात् ज्यों ज्यों हम आगे बढ़ेंगे, संसार में कामुकता का प्रकोप भी बढ़ेगा। विदाई प्राणी के मन पर काम ही काम सवार है। चारों और कामुक वातावरण है। ऐसे में योगी जनों को माया के सभी सूक्ष्म वीरों का स्पष्ट ज्ञान होना आवश्यक है।

जैसे यदि दो पहलवान आपस में लड़ रहे हों और एक पहलवान को यह ज्ञान ही न हो कि दूसरा पहलवान कौन सा दांव लगा सकता है तो समय पर वह उसके दांव को काट नहीं सकेगा और हार जाएग। परन्तु यदि उसे दूसरे पहलवान के सभी आक्रमक दांवों का ज्ञान हो तो वह उसकी एक भी चाल नहीं चलने देगा। ठीक इसी प्रकार हमारा भी माया से युद्ध है। हमें विजयी बनने के माया के सभी सूक्ष्म रूपों का ज्ञाना होना चाहिए अन्यथा हमारे मुख से यही निकलेगा कि हमें क्या पता था कि माया इस तरह भी वार करती है। कहीं हम माया के वार को दूसरों को प्यार व सहयोग समझ लेंगे, तो कहीं माया को सुखों की अनुभूति मान लेंगे। और तब हमारे हाथ लगेगी पश्चाताप.....।

सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य-महान तप

विद्वान कहते हैं कि ब्रह्मचर्य सबसे बड़ी तपस्या है। यही सबसे बड़ा पुण्य भी है। तराजू के पलड़े में एक ओर चारों वेद व दूसरी और ब्रह्मचर्य हो, तो भी ब्रह्मचर्य का पलड़ा ही भारी रहेगा। इसे सबसे बड़ा तप कहने के कारण यही है कि पहले मनुष्य को इसमें कष्ट होता हैं तथा फिर भासता है आनन्द। मनुष्यों को अपनी सभी इच्छाओं को मारना होता है–दूसरों को सांसारिक सुख भोगते देख, अपने झुकाव का बल–पूर्वक, ज्ञान पूर्वक रोकना होता है। इसीलिए यह बड़ा भारी त्याग व बड़ा भारी तप है।

निःसन्देह जब चहुं और काम की क्षणिक आनन्दकारी सरिता बह रही है, वहां लाखों में से कोई एक वीर उसका परित्याग करे–यह गायन योग्य महावीरता है। जहां माया ठगनी रंग बिरंगे रूप बनाकर लुभाने के लिए तत्पर हो, वहां से मुहं फेर लेना महान त्याग है। जहां पाश्चात्य देशों मे मनौवैज्ञानिकों ने काम को स्वीकृति दी हो, वहां इससे दूर हो जाना विज्ञान को महान चुनौती देना है।

परन्तु अनेकों ने यह चुनौती दी है, क्योंकि सामने खड़ा है सर्व शक्तिवान भगवान। जिसके बुलावे पर लाखों नर नारी संसार की परवाह न करते हुए इस पवित्र गंगा में कूद पड़े है। जिन्होने यह साहस किया है, वे ही संसार के श्वांस तुल्य हैं, उनका ही बोल बाला होगा। वही पूज्य होंगे और उन्हीं के भाग्य पर समस्त विश्व गर्व करेगा।

परन्तु जो दुर्भागे, भगवान को छोड़कर माया के प्यार में राह भूल गये, ऐसी कमजोर रुहों को विनाश की चक्की में कष्ट पाते देख संसार भी रहम करेगा कि देखों ये भी कैसे बुद्धिहीन थे जिन्होंने दैहिक प्यार की स्वार्थता को न पहचान कर द्वार पर आये भाग्य को भी लात मार दी।

जो शक्तिशाली मनुष्य कामुक भावनओं का त्याग कर योग–युक्त जीवन जीता है, इस मार्ग में आई बाधाओं को हिम्मत से पार कर जाता है, और संसार के रोके नहीं रूकता, उसका यह त्याग उसके लिए महान तेज बन जाता हैं, जिस तेज की चमक मनोवैज्ञानिक और कुरीतियों में फंसे लोगों की मान्यताओं को झूठा सिद्ध करेगी।

तो ब्रह्मावत्सों, इस महान व्रत को अपनाकर जिस तपस्या का आपने शुभारम्भ किया हैं, उससे पीछे न हटो। संकल्पों में निर्बलता न आने दों। यह न भूलों की तुम्हारे साथ सर्वशक्तिवान का बल है। तुम अपनी तपस्या में अवश्य ही सफल होंगे।

सावधान रहो-

जैसे तपस्वियों के सामने माया भिन्न भिन्न रूप धर कर आती थी, सीता के समक्ष रावण साधू बनकर आया, वेसे ही तुम महान तपस्वियों के सामने भी

काम की माया विभिन्न रूप रचकर आयेगी। परन्तु तुम्हारे तप व वैराग्य की अग्नि में वह भस्म हो जाए। वह तुम्हें अपनी ओर आकृषित न कर ले। तुम कहीं उसे ही तपस्या से बढ़कर सुनकर मान लो, अपनी दृढ़ता को मंद न कर दो–बस यही सावधानी रखना।

आगे चलकर अनेक तमोप्रधान रुहें तुम्हारे पास आयेंगी। वे तुम्हें झूठा प्यार दिखाएगी, और कहीं तुम उनका कल्याण करने के बहाने, रहम दिल बनकर नष्ट न हो जाओ। याद रखो तुम दाता हो तुम्हें किसी का भी प्यार स्वीकार नहीं करना है। तुम्हारा दया भाव तुम्हें निर्बल न बना दे। याद रखना इस तमोप्रधान प्यार में बड़ा आकर्षण है–यह तपस्वियों की तपस्या नष्ट करने वाला है।

जब तुम्हारे पास सम्पूर्ण अपवित्र आत्मायें आए तो याद करो कि मुझे इन्हें पवित्रता की दृष्टि देकर पवित्रता का बल देना है न कि इनकी ओर आकर्षित होना है। "मैं पवित्रता की अवतार हूँ, मेरे पास जो भी पवित्र भावनाओं से आएगा, निर्मल हो जाएगा।" यह शुद्ध स्वमान रहे। इस प्रकार अपनी स्वस्थिति में रहने से दूसरों का प्रभाव आप पर नहीं पड़ेगा बल्कि आपके पवित्र वायब्रेशन्स उनके चित्त से काम की अग्नि को बुझाएँगे।

आपको ज्ञात हो कि दूसरों का प्यार आपकी काम–वृत्ति को क्षणिक ही तृप्ति देगा। और पीछे प्रारम्भ होगी पश्चाताप की कहानी। इसलिए इस प्यार की नश्वरता को, क्षणभंगुरता को समझो और इस में अटक कर अविनाशी ईश्वरीय प्रेम से वंचित न रहो। क्योंकि ईश्वरीय प्रेम केवल एक बार मिलता है जबकि मनुष्यों का प्रेम तो जन्म जन्म प्राप्त होता है। इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि हमें मनुष्यों से प्रेम नहीं रखना है। परन्तु हमें उनके प्रेम में भटक कर प्रभु प्रेम के महत्व को भूल नही जाना है। ध्यान रहे कि दूसरों का प्यार कहीं हमारा लगाव हमारी बुद्धि को अस्थिर न कर दे।

इच्छाओं को समाप्त करो-

कैसी विडम्बना है कि कुमार कुमारियों को गृहस्थी बनने की इच्छा और गृहस्थी कहते हैं कि यदि हम कुमार कुमारी होते और उसी आयु में हमें भगवान मिलते तो हम कमाल कर देते।

चाहे आपके कुमार कुमारी हैं या गृहस्थी, अपनी काम की प्यास को नष्ट करो। यह प्यास कभी भी तृप्त न होने वाली है। भोग के बाद यह प्यास अधिक बढ़ जाती है। तुम्हें तो जन्म जन्म से प्यास थी प्रभु चिंतन की और प्रभु ने स्वयं आकर तुम्हारी प्यास मिटा दी तो अभी विकारों की प्यास तुम्हें क्यों सताती है? उसमें ही तुम जलते आए, अब इससे निकल जाओ। अमृत से स्वयं की प्यास बुझाओ।

कई कुमार जब बीमार होते हैं और उन्हें कोई सहारा नहीं मिलता, जब उन्हें कोई नहीं पूछता, जब उन्हें कोई भोजन नहीं देता तो उन्हें जीवन साथी की याद आती है। निःसन्देह यह परीक्षा की घड़ी होती है भगवान भी राजायी देने से पूर्व खूब तपाकर देखता है। ऐसी परीक्षा की घड़ी में हिम्मत रखना, निराशा न होना और स्वयं परमपिता से विभिन्न अनुभूतियां करना यह भी महान तपस्या है।

क्या हम नहीं जानते कि सच्चे भक्तों की भगवान ने स्वयं वेष बदलकर सेवा की, उनके काम स्वयं किये, उन्हें सुरक्षा प्रदान की, तो क्या अपने सच्चे बच्चों की सेवा वह नहीं करता। अवश्य करता हैं। सैकड़ो के अनुभव हैं..... सच्चे बच्चों को कभी कोई कष्ट नहीं होता।

युगलों को साथ घूमते देखकर, एक दूसरों को बहलाते देखकर, सुख–दुख बांटते देखकर कईयों को ब्रह्मचर्य से विचलित होने की भावनाएं उठती हैं। परन्तु आज अनेक युगलों का जीवन परस्पर संघर्षमय, तनाव युक्त व अत्यन्त दुखी बीतता है। मन बहलाओं, भगवान को अपना जीवन साथी बनाकर, सुख पाओ उसकी यादों में मग्न होकर।

पुरानी यादों को भूल जाओ-

विकारी जीवन की पुरानी यादें अवश्य ही इस श्रेष्ठ तपस्या को कड़ुवा बना देती है। कलियुगी तमोप्रधान युग में प्रायः सभी का जीवन कामुकता के गन्दे नालों में पड़े पड़े बीता। परन्तु वह तो बीत चुका, "उन गडे मुर्दों को अब उखाड़ने से क्या लाभ। वह तो अज्ञान का खेल था, अब उसे भूल जाओ। जिसकी जैसी भी कर्म कहानी रही, अब उन पन्नो को बार बार देखो। जो मनुष्य अपने वर्तमान को पास्ट से अलग नहीं कर पाता उसका भविष्य कभी

भी स्वर्णिम नहीं हो सकता। फिर भला सोचो कि उसे याद करने से तुम्हें मिलेगा भी क्या, क्षणिक तृप्ति व फिर उदासी। इसलिए उस कूड़े को नदी में बहाकर स्वयं को पावन भविष्य की ओर हतगामी करो।

यदि तुम्हारे पास्ट के संस्कार पुनः पुनः प्रकट होकर तुम्हारी तपस्या को भंग करते हैं तो स्वप्नों में प्रकट होकर तुम्हारे ध्यान को विचलित करते हैं तो भी तुम हिम्मत न हारो। स्वप्नों से न घबराओ। ज्ञान--योग बल से ये स्वच्छ होते जाएंगे। जैसे जैसे तुम्हारा योगबल बढ़ेगा नींद सतोप्रधान होगी। इसलिए स्वप्नों से उदास निराश न होकर तुरन्त इन्हें भूल जाओ।

आत्मिक दृष्टि की तपस्या करो–

शरीर किचड़े का डिब्बा व आत्मा इसमें विराजमान हीरा। हम देह की नश्वरता को जानते हुए इससे वैराग्य धारण करें। इस मिट्टी से अब खेलकर हमें मैला नहीं होना है और देह के अन्दर चेतना आत्म विराजमान है। दृष्टि को व बुद्धि को आत्मा पर ले चलें।

देह, पतित तत्वों द्वारा निर्मित है। इसमें १५ वर्ष से ३०, ३५ वर्ष की आयु तक विशेष रूप से कामुक हॉर्मोन्स की वृद्धि होती है। फलस्वरूप देह में आकर्षण बना रहता है। इसलिए ब्रह्मचर्य की तपस्या करने वालों को देह को देखते हुए भी, उसमें स्थित आत्मा को देखने को अभ्यास करना चाहिए। देह को देखने की वृत्ति और इसे देखकर क्षणिक वृत्ति ये सब हमारी तपस्या में बाधक हैं व वृद्धि की स्थिरता को भंग करने वाले हैं।

परन्तु पहले यह आवश्यक है कि हम स्वयं को स्वयं के देह के आकर्षण से मुक्त करें। स्वयं की ही देह में यदि आकर्षण है, उसे सजाने संवारने की कामना है तो हम कभी भी अशरीरी स्थिति का अनुभव नहीं कर सकेंगे और अपनी कर्मइन्द्रियों को शीतल भी नहीं कर सकेंगे। इसलिए जो तपस्वी स्वयं अशरीरी होने की तपस्या में सफल है, वहीं आत्मिक दृष्टि की तपस्या में भी सफल होगा। नहीं तो मनुष्य देह के सूक्ष्म आकर्षण वश कर्मइन्द्रियों से कई तरह की अभिव्यक्ति करते हुए स्वयं की तृप्ति करता है जो कि तपस्वियों की असफलता है।

समय की पुकार-

अब हम ईश्वरीय कार्य को प्रत्यक्षता के द्वार पर ले जा रहे हैं। शीघ्र ही आध्यत्मिक क्रान्ति की लहर चलेगी, उन की जयजयकार होगी, जिन्होंने सफल तपस्या की होगी और उनके पश्चाताप के दिन होंगे, जिन्होंने अलबेलेपन में अपने अमूल्य समय को कोड़ियों के भाव गंवाया होगा।

हमें तो अपनी पवित्रता के बल से प्रकृति को स्वच्छ करना है। सभी को यह बल देकर मुक्ति का वरदान देना है, अनेक रोगियों को रोग–मुक्त करना है। चमत्कार करेगी पवित्रता। अतः अपने भावी कर्तव्यों को ध्यान में रखते हुए इस तपस्या को दृढ़ता से पूर्ण करें।

हमें ध्यान रहे कि सम्पूर्ण पवित्रता में देह का तनिक भी आकर्षण नहीं रहता, मन ईर्ष्या, घृणा से मुक्त होकर शीतल हो जाता है, बुद्धि दिव्य एवं स्वच्छ बन जाती है। व्यर्थ और साधारण संकल्पों से मुक्त होकर आत्मा श्रेष्ठ स्वमान में विचरण करने लगती है।

यह ही वो सर्वश्रेष्ठ समय है जबकि स्वयं भगवान हमारे लिए पवित्रता का श्रृंगार लाया है। उसकी पावन दृष्टि से हमारी तपस्या अति सरल हो गई है। जो काम आज तक असम्भव थे, वे ईश्वरीय शक्ति से सम्भव ही नहीं बल्कि सरल हो गए हैं। तो समय की घंटी बज रही है और सन्देश दे रही है कि हे योगियों स्वयं को सभी आकर्षणों से मुक्त कर लो।

तो आओ, इस तपस्या वर्ष में हम नर नारी के मान से परे हो जाएं। योग की साधना हमारी सम्पूर्णता ब्रह्मचर्य की तपस्या पर ही आधारित है। इसके लिए प्रतिदिन एक बार अपने सम्पूर्ण स्वरूप को अपने सामने अवश्य प्रत्यक्ष करो, स्वयं की उससे तुलना करो। "मैं ही ये हूँ" – यह भावना पक्की करो। इससे हमें अपनी पवित्रता के बल का आभास भी होगा और पवित्रता का नशा भी बढ़ेगा। और माया के सभी नशे समाप्त हो जाएँगे। याद रहे सम्पूर्ण पवित्र बनकर हम बाप समान बन जाएंगे और हमें वही शक्तियां प्राप्त हो जाएगी जो सर्वशक्तिवान के पास हैं। अतः स्वयं से दृढ़ प्रतिज्ञा करो कि हमारी इस तपस्या को माया का कोई भी रूप भंग नहीं कर सकेगा।

त्याग तपस्या का आधार वैराग्य

एक दिन आयेगा, जब इस भूमण्डल पर चहुँ और वैराग्य की लहर फैल जाऐगी। प्रत्येक मन में समाया हुआ राग, वैराग्य की आग में जलकर नष्ट हो जाऐंगा, क्षणिक सुखों के पीछे चलने वाली भाग दौड़ धीमी पड़ जाऐगी और प्रत्येक मनुष्य को विषय वासनाओं की नश्वरता का आभास होगा। तब सभी ईश्वरीय मार्ग का अनुसरण करेगे और अपने परमपिता से मुक्ति व जीवन्मुक्ति का वरदान पाने को उत्सुक होंगे।

परन्तु ये सब कब होगा व क्यों होगा? हम जानते है कि बिना वैराग्य के सम्पूर्णता प्राप्त नहीं होगी क्योंकि विभिन्न प्रकार का राग (आसक्तियां) ही तो बुद्धि को भटका रही है और जब तक बुद्धि स्थिर नहीं हुई विकर्म विनाश नहीं होगे और आत्माएं अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं करेगी।

कुछ ही समय के बाद जब संसार में प्रकृति विनाश का ताण्डव नृत्य करने लगेगी, जब मनुष्यों को लगने लगेगा कि न जाने कब इस संसार से डेरा उठ जाए, जब उन्हें महसूस होगा कि धन और वैभव, मनुष्य और पद उन्हें सहारा नहीं दे सकते, तब उनकी बुद्धि का खिचांव अपने सहारे की ओर होगा।

परन्तु योगयुक्त आत्माओं का वैराग्य घटनाओं पर आधारित नहीं होता। क्योंकि घटनाओं पर टिका वैराग्य, घटनाएं बदलते ही लोप हो जाती है। उनका वैराग्य ज्ञान–युक्त व अनुभवों के आधार पर टिका होता है और ऐसे महान योगियों का वैराग्य ही संसार की वैराग्य की लहर फैलायेगा।

सृष्टि के अन्तिम चक्र में तो सभी को वैराग्य होगा परन्तु तब पुरुषार्थ का अधिक समय नहीं मिलेंगा। भय और अशान्ति के माहौल तीव्र गति से साधना भी नहीं हो पायेगी। इसलिए महत्व समय से पूर्व उत्पन्न हुए वैराग्य का। समय पर वैराग्य उत्पन्न होने का ज्यादा लाभ नहीं होगा।

राग के कारण क्या है?

जिधर भी नजर उठाकर देखो हर प्राणी कहीं न कहीं आसक्त है, कहीं न कहीं उलझा हुआ है। कलियुग के इस सम्पूर्ण प्रभाव के काल में ज्ञानी और योगी

भी कहीं न कहीं आसक्त हो जाते है। कोई वैभवों के सुखों से तृप्त हो रहा है तो कोई मनुष्यों के प्यार को ही सर्वस्व प्राप्ति मान रहा है। किसी की दौड़ मान–शान की प्राप्ति के पीछे है तो कोई अल्पकालीन प्राप्तियों को ही सुखों का साधन मान रहा है।

परन्तु ये 'राग' मनुष्य को सम्पूर्ण सन्तुष्टि नहीं दे पा रहा है। आज खुशी मिलती है तो कल गम, आज सुखों का सागर लहराता है तो कल दुखों की त्रिवेणी बहने लगती है। सभी यह अनुभव कर रहे है कि इनमें यथार्थ सन्तुष्टि नहीं।

परन्तु ये 'राग' बढ़ा क्यों? इसकी शुरुआत हुई देहमान के बढ़ने से। देह की आवश्कताएं पूर्ण करने के लिए मनुष्य ने तन, मन, धन व शक्तियां लगाई इसलिए वह पदार्थो में आसक्त हो गया।

संसार की प्राप्तियों को सर्वस्व मानने की भूलने 'राग' में वृद्धि की। जबकि इस संसार में अनेक मनुष्य यह जानते है कि जिनके लिए उसने रात दिन मेहनत की, वे समय पर उसके काम नहीं आये।

इसी तरह 'मेरापन' राग उत्पन्न करता है। देह में आसक्ति राग उत्पन्न करती है। पदार्थो वे वैभवों का भोग भी राग में वृद्धि उत्पन्न करता है। इच्छाएं व तृष्णाएं राग को जन्म देती है। योगियों को सावधानी पूर्वक स्वयं पर ध्यान रखना चाहिए कि अपने महान लक्ष्य को भूलाकर, ईश्वरीय सुखों की प्राप्ति के महत्व को भूलकर, कहीं वे राग युक्त तो नहीं हो गये हैं। और हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि एक बार जन्मा 'राग' पुनः वैराग्य में काफी देर से बदलता है।

वैराग्य तीन प्रकार का है

सतो, रजो व तमो–ये तीन श्रेणियां है वैराग्य की वैसे तो आज तक लोग समझते रहे कि वैराग्य सन्यासियों के लिए है, हमारा इससे क्या लेना देना। परन्तु ईश्वरीय ज्ञान की यही महानता है कि इसने गृहस्थ में रहने वालों को भी वैरागी बना दिया।

सतो प्रधान वैराग्य तो वह है जो जीवन के महान लक्ष्य को पाने के लिए ज्ञान

युक्त, होकर किया जाता है। ये वैराग्य स्थाई होता है, ये कभी 'राग' में नहीं बदलता। और यदि कभी थोड़ा 'राग' उत्पन्न हो भी जाए तो यह शीघ्र ही वैराग्य में परिणित हो जाता है। ब्रह्मा बाबा का वैराग्य व कई महान पुरुषों का वैराग्य इसी श्रेणी में आता है।

रजो प्रधान वैराग्य–वो वैराग्य है जो कुछ घटनाओं को देखकर उत्पन्न होता है। प्रायः लोग महात्मा बुद्ध के वैराग्य को रजोप्रधान वैराग्य कहते है। परन्तु ऐसा नही हैं उसके मन में घटनाओं के कारण वैराग्य नहीं हुआ। वैराग्य के बीज तो उनके पास पहले से ही थे। घटनाओं ने तो उन्हें अंकुरित किया। इसलिए महात्मा बुद्ध के वैराग्य को तो प्रथम श्रेणी में ही रखा जाएगा क्योंकि उनका वैराग्य कभी राग में नहीं बदला। रजो प्रधान वैराग्य के राग में बदलने के अवसर होते हैं।

तीसरा वैराग्य ही तमोप्रधान। मनुष्य घर से दुखी होकर, बड़ी हार हो जाने पर, परस्पर संघर्षो के कारण या रोज मनुष्यों की मृत्यु को देखकर वैराग्य में आ जाता है और कई लोग इस तरह सन्यास ले लेते हैं। परन्तु यह वैराग्य ज्यादा दिन नहीं टिकता, इसलिए अनेक सन्यासी पुनः जहां तहां आसक्त नजर आते है। ऐसे वैराग्य के कारण सन्यासी बाद में पछताते है कि हमने भावावेश में ऐसा निर्णय क्यों लिया।

जिनके पास ईश्वरीय ज्ञान है उन्हें ज्ञान युक्त वैराग्य धारण करना चाहिए ताकि वैराग्य स्थाई रहे। सुखदाई हो। आम धारणा यह भी है कि वैराग्य जीवन को शुष्कता के मार्ग पर ले चलता है। परन्तु यह उन्हें ही होता है जो या तो विवेक युक्त वैराग्य नहीं अपनाते, या उनसे वैराग्य नहीं करते, जिनसे करना चाहिए, या वैराग्य के बाद ईश्वरीय सुखो के अनुभव में नहीं रहते। यदि वैराग्य के बाद जीवन शुष्कता के मार्ग पर चलता है तो उस वैराग्य का कोई महत्व नहीं। सच्चा वैराग्य वही है जिसके बाद जीवन ईश्वरीय अनुभवों का भण्डार बन जाए।

प्रजापिता ब्रह्मा का वैराग्य-

विश्व के लिए अनुकरणीय विश्व गुरु ब्रह्मा का वैराग्य हम सभी के लिए

प्रेरक है। ईश्वरीय अनुभूतियों के आधार पर तथा सृष्टिचक्र की समाप्ति ज्ञान के आधार पर उनमें वैराग्य उपजा और जो पूरे ३५ वर्ष तक एक रस रहा। कभी किसी ने नहीं देखा होगा। कि उनके मन में पदार्थो के लिए राग जन्मा हो। दैहिक सम्बन्धी उन्हें सम्पूर्णतया विस्मृत हो चुके थे। अपने लिए कुछ नहीं, सब कुछ दूसरों के लिए विश्व सेवा के लिए यही उनके सात्विक वैराग्य की परिसीमा थी। इसी वैराग्य ने उन्हें एक महान तपस्वी बना दिया था, उनकी तपस्या विश्व के लिए महान बल बन गई।

वैराग्य-त्याग व तपस्या की नींव

मनुष्य जीवन त्याग की चेतना प्रतिमा बन जाता है जहां वैराग्य स्वाभाविक रूप ले लेता है। वैरागी को कुछ भी त्याग करने में मेहनत या संकोच नहीं होता। उसके अन्दर से यह आवाज उठती रहती है कि ये सब कुछ प्राप्त करना तेरा लक्ष्य नहीं है। चाहें मान–सम्मान का विषय हो, या कोई अन्य वैभव–उसे लगता है कि इस जीवन में इनके पीछे नहीं भागना है। उसे चाहे बड़ा त्याग करना पड़े या छोटा, त्याग के बाद उसे ये नहीं लगता कि उसने कुछ त्याग किया है।

'वैराग्य' योगी को क्योंकि अनासक्त बना देता है, इसलिए वह सभी बन्धनों से मुक्त होता जाता है, उसके मन में व्यर्थ का ज्वार नहीं उठता संकल्प की गति धीमी पड़ जाती है और इस प्रकार वह तपस्या में सफल होता है उसे 'योग' का रस व सुख प्राप्त होने लगता है जिससे वह महान तपस्वी बन जाता है।

इसके विपरीत वा मनुष्य जो अनेक जगह आसक्त है, वह योगी जो अपने महान लक्ष्य को भूलकर राह भटक गया है महान तपस्वी नहीं बन सकता क्योंकि उसके मन मे उठा हुआ व्यर्थ का गुब्बार उसे स्थिर चित्त नहीं होने देगा।

हमारा वैराग्य बेहद का है। हमें सर्वस्व त्याग कर परमधाम वापिस जाना है। सब कुछ छोड़ना है या वो स्वतः ही छूट जाएगा, तब वह हमारी इन्तजार नहीं करेगा परन्तु जो मनुष्य अत्यधिक आसक्त हैं, वे तब अत्यधिक पीडित होंगे।

यदि आप विश्व परिवर्तन के कार्य में महान भूमिका निभाना चाहते है तो अपने

राग को समाप्त कर दें, महान योगी बन जाए तब आने वाले समय में आप महादानी बनकर विश्व कल्याण के महान कार्य को सम्पन्न कर सकेगे।

हमारा वैराग्य मुख्य रूप से ५ बातों से हो–

विषय–– विकरों से वैराग्य जन्म–२ हम आत्माएं इन विकारों में लिप्त रही है, फलस्वरूप विकारों के प्रति आसक्ति अपनी चरमसीमा पर है। एक योगी को इन क्षणिक व कभी वृत्त न होने वाले विकारों से वैराग्य धारण करना चाहिए। यह जानकर कि इनमें अन्ततः दुख, अप्राप्ति व असन्तुष्टी ही है। इनसे मुख मोड़ लेना चाहिए।

ज्ञानी आत्माएं तो जानती है कि अब समयानुसार ये ईश्वरीय आज्ञा है और इस पर चलकर ही हम ईश्वरीय मिलन का रस चख सकेगे। ज्ञानी आत्माएं मोटे रूप से तो विकारों का त्याग कर ही चुकी, परन्तु वृत्ति से विकारों के बीज को नष्ट करने के लिए बीज रूप स्थिति की साधना करनी चाहिए।

मान–शान से वैराग्य– मान–शान के पीछे भाग–दौड़ मनुष्य की एक स्वाभाविक वृत्ति बन चुका है। परन्तु जिन्हें भगवान मान दे रहा हो, जिन्हें मन्दिरों में भक्त मान दे रहे हो, उनके लिए मान–शान की इच्छा कितने मूल्य की है? तो मन में वैराग्य ले आये इस अल्पकालीन मान सम्मान से और स्वमान में स्थित होकर सर्वश्रेष्ठ मान के अधिकारी बने।

इच्छाओं व तृष्णाओं से वैराग्य-

तृष्णाएं तो आज मनुष्य को अपने इशारे पर नचा रही है। भगवान को पाकर, उससे समस्त अधिकार पाकर इच्छाओं की गुलामी शोभा नहीं देती। जिन्हें सबकी इच्छाएं पूर्ण करनी है वे तृष्णाओं के पीछे कैसे दौड़ सकते है। तो 'हमे कुछ नहीं चाहिए' इस वैराग्य को धारण करके महान आत्मा बन जाए।

देह व देह के सम्बन्धों से वैराग्य-

अपनी देह को क्या सजाना। श्रृंगार तो अब रूह का करना है जो ५००० वर्ष तक स्थाई रहे। देह के सम्बन्ध हमारी ५००० वर्ष की इस यात्रा के अन्तिम सम्बन्ध ह। हम उनमें आसक्त न रहे। इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि देह व

देह के सम्बन्धियों से हम नफरत रखे या उनके प्रति कर्तव्य पालन न करें। परन्तु सब कुछ निमित्त भाव से हो, मेरे मन पन से नहीं। दोनों का सन्तुलन रखना यही ज्ञानियों का ज्ञान है।

व्यर्थ से वैराग्य -

व्यर्थ बोलने, सुनने, देखने, सोचने से वैराग्य धारण करना है। व्यर्थ में रूचि आत्मा को उलटे बहाव से बहा ले जाती है व्यर्थ की रूची आत्मा को निर्बल करती है और बुद्धि को आखिर। जिन्हें महान बनना है उन्हें व्यर्थ से वैराग्य धारण करना ही पड़ेगा। जिन्हें शक्तिशाली बनकर अनेकों की निर्बलता मिटानी है उन्हें व्यर्थ से वैराग्य अपनाना ही पड़ेगा।

वे इसका अर्थ ये नहीं कि विद्यार्थी पढ़ाई में रूचि न लें या कोई मनुष्य अपने व्यापार या अन्य कार्य में रूचि न ले। हमारा वैराग्य हमें निष्क्रियता नहीं सिखाता। निमित्त भाव से व सब कुछ परमपिता परमात्मार्थ कर रहे है-इस भावना से कर्म करे। कई भावुक लोग, अच्छे कार्यो से भी वैराग्य धारण कर लेते है यह विवेक का अभाव ही माना जाऐगा।

तो आओ विश्व में वैराग्य की सरिता बहाये ताकि मनुष्य सम्पूर्ण सुखी हो, उन्हें जीने का सुख मिले। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि कुछ ही महान आत्माओं का वैराग्य संसार में वैराग्य की लहर लायेगा और अनेक अन्य योगियों के पुरुषार्थ को तीव्र गति देगा। यदि विजयी रत्न ही वैरागी नही होगे तो यहां ही नवयुग की स्थापना के दिव्य कार्य में देर होगी और अनेक मनुष्य को दुख-मय जीवन जीना पड़ेगा। तो हे विजयी रत्नों राग को पहचान कर वैराग्य का सुख प्राप्त करो।

तपस्या अर्थात् एकाग्रता

बी. के. सूर्य
माउण्ट आबू

मन-बुद्धि की एकाग्रता के बिना सभी साधनाएं असफल हो जाती है। एकाग्र-वृत्ति के बिना कर्मों में कुशलता प्राप्त नहीं होती, एकाग्रचित्त हुए बिना ज्ञान-अमृत का श्रवण मन को आनन्दित नहीं करता, स्थिर बुद्धि के अभाव में बुद्धि शनैः शनैः निर्बल होने लगती है। हमारी राजयोग की तपस्या एकाग्रता के द्वारा हमें सर्वश्रेष्ठ सिद्धियों का अधिकारी बना देती है। हम जब अपने सभी संकल्पों को एकाग्र कर लेते हैं, तो संकल्प शक्ति असम्भव कार्यों को भी सम्भव करने में सफल होती है, मन की लेजर किरणें समस्त विकारों को भस्मीभूत करके आत्मा को सम्पूर्ण पावनता के मार्ग पर ले चलती हैं। जब बोल एकाग्र हो जाते हैं तो वाचा की सिद्धि प्राप्त हो जाती है और जब बुद्धि एकाग्र हो जाते हैं तो बुद्धि (तीसरा नेत्र) दूर के दृश्यों को भी सम्मुख के दृश्यों की ही तरह स्पष्ट देख लेती है।

ऐसी मन-बुद्धि को एकाग्र करने की तपस्या सरल तपस्या नहीं है। इसके लिए अत्यन्त त्याग व वैराग्य के साथ निरन्तर अभ्यास की आवश्यकता है। हमारी एकाग्रता न केवल मन को निरसंकल्प स्थिति तक पहुँचाने की है, बल्कि मन को इतना शक्तिशाली बना देने की है कि वह सहज ही स्थिर होकर परम आनन्द के सिन्धु में रमन करने लगे। सांसारिक तृष्णाओं के पीछे भटकता मन, विकारों के सूक्ष्म रस को ग्रहण करने वाला मन, विनाशी वैभवों व सुन्दरता के प्रति आकर्षित बुद्धि तो एकाग्र होने के स्वप्न भी नहीं देख सकती।

राजयोग की सफल तपस्या के लिए जो योगी एकाग्रता के द्वारा अनन्त शक्तियों के राजा बनना चाहते हैं वे अपना लंगर इस पुरानी दुनिया से उठा लें। उन्हें चाहिए कि वे सभी किनारे छोड़ दें। किनारे से चिपके रहने का संस्कार योगियों को लक्ष्य तक नहीं पहुँचने देगा। चाहे किसी को नये-नये अनुसन्धान करने हैं या प्रत्यक्षता के काल में मुख्य पार्टधारी बनना है, चाहे कोई कर्मों में सहज सफलता चाहते हैं या स्वयं के जीवन को निर्विघ्न देखना चाहते हैं, उन्हें चाहिए कि वे एकाग्रचित्त बनें।

पवन तुल्य तीव्रवेगी मन को बांधना और विभिन्न ज्ञान-अज्ञान में भी बुद्धि को स्थिर करना सचमुच ही टेढ़ी खीर है। जो इसमें सफल हुए वे रल, विजयी रत्न, पूज्यनीय आत्मा बन गये व स्वर्ग के राज्य अधिकारी बन । परन्तु जो इसमें सफल नहीं हुए वे ईश्वरीय सुखों से दूर बाह्यमुखता के भंगुर सुख में ही तृप्त होने को बाध्य हुए।

अनेक राजयोगी कितने ही वर्षों से अपनी साधनाओ में संलग्न है। तु कोई निराश होकर घर में आराम करने लगे, कोई माया के संघर्ष में रत जीत के अन्धकार प्रकाश में धीमे-धीमे चल रहे हैं। परन्तु अल्प संख्या में योगी है जो सम्पूर्ण विजय की ओर तीव्रगति से बढ़ रहे हैं। उनकी सफलता रहस्य है - उनका सूक्ष्म त्याग, उनका बेहद का वैराग्य, अपने लक्ष्य के प्रति समर्पणता, कार्य करते हुए व संगठन में रहते हुए भी उनकी निर्लिप्त स्थिति एकाग्रता स्वरूप की धारणा।

तो आओ एकाग्र-चित्त होने का संकल्प करें। जरा देखें- इस मार्ग में आएँ क्या-क्या है? संक्षेप में वे अवरोधक हैं:-

मान-शान के पीछे दौड़ना, योग में एकाग्रता का महान शत्रु है।

हम स्वयं से पूछे- क्या भगवान के पास हम इसीलिए आये थे? या अभी तक हमने समझा ही नहीं कि मान-शान की मृगतृष्णा योगी के भटकाव की राह है। दूसरों को मान मिलता देख यदि हमारे अन्दर भी वही इच्छा जागृत होती है तो हमारे पास ज्ञानाभाव है।

ज्यादा सोचने की आदत, कमजोर मन की प्रतीक है। स्वयं के संकल्पों को इतना सशक्त बनायें कि वे थोड़े में ही ज्यादा काम कर लें। ज्यादा सोचने से मन की गति बढ़ जाती है और अन्त में हम पाते हैं कि परिणाम कुछ भी नहीं मिला।

क्रोध व मोह-मन को भटकाते हैं।

कर्मों में आसक्ति, कर्ममय जीवन बना देती है। कोई भी विकर्म को होना मन को अस्थिर कर देता है।

गपशप करने की आदत, सांसारिक बातें जानने की इच्छा एकाग्रता के मार्ग में भारी रोड़ा है।

⇒ चिन्ताएं व भय-व्यर्थ को बढ़ावा देते हैं। वो योगी जो निर्भय है, स्थिर-चित्त हो सकता है।

⇒ इधर-उधर देखने की आदत व इच्छा, बुद्धि को बरबस बाह्यमुखी बना देती है। ऐसी बुद्धि कभी भी लक्ष्य पर स्थिर नहीं हो सकती।

⇒ ज्ञान की विस्मृति, ईश्वरीय महावाक्यों में आनन्द न आना व ज्ञान की सभी बातों की लम्बे समय तक विस्मृति एकाग्रता को भंग करती है।

जो योगी एकाग्रचित्त होना चाहें

अमृतवेले मन-बुद्धि को एकाग्र करें:-

ब्रह्म मुहुर्त का समय वरदान का समय है। इस समय हमारे परमपिता हमें सर्व खजाने देने के लिए व सर्व वरदान देने के लिए प्रस्तुत रहते हैं। यदि हम बुद्धि को एकाग्र करके बैठेंगे तो अनेक शक्तियां वरदान रुप में प्राप्त हो जायेंगी।

मन को आनन्दकारी संकल्पों से भरें। प्रारम्भ में मी मन को संकल्प रहित न करें, नहीं तो खाली मन शीघ्र ही भागने लगेगा। भरपूर मन ही स्थिर होगा। मन का स्विच खोलें और सोचें- कौन खड़ा है मेरे द्वार पर... जीवन की राहों में चलते-चलते कौन मिल गया मुझे... सोचा क्या था और हो क्या गया... भाग्य विधाता स्वयं मेरे घर मेहमान बनकर आया है... मेरी झोली भरने, मेरा बिगड़ा भाग्य संवारने... कितना आश्चर्य, एक समय था, हम उसका आहवान करते थे और एक ये भी समय है कि अब वो हमारा आहवान कर रहा है... आदि आदि...

इस प्रकार मन को खुशी से भरपूर करके, मन व बुद्धि के द्वारा "परिवर्तन व प्रवेश" का अभ्यास करें। याद रहें- मन संकल्प शक्ति का प्रयोग करेगा और बुद्धि उसी स्वरुप को देखने का।

मन में संकल्प करें कि मैं चमकती मणि भ्रकुटि के मध्य विराजमान हूँ। मुझसे चारों ओर रंग बिरंगा प्रकाश फैल रहा है। बुद्धि में अपना यही स्वरुप देखें। 10 सेकेण्ड इस पर एकाग्र होकर... फिर मन में संकल्प उठायें और बुद्धि से देखे कि मैं आत्मा सूक्ष्म शरीर सहित देह से निकल कर सूक्ष्मवतन की ओर जा रही हूँ। 5 सेकेण्ड में मैं सम्पूर्ण फरिश्ता पहुँच गया सूक्ष्मवतन में अव्यक्त बापदादा के समक्ष। बाबा की भ्रकुटि से एक सुन्दर प्रकाशपुंज मुझ पर पड़ रहा

है। 10 सेकेण्ड इस अनुभव को करने के बाद मन में संकल्प करें कि मैं आत्मा अपने सूक्ष्म शरीर को सूक्ष्म वतन में छोड़कर मूलवतन की ओर जा रही हूँ। बुद्धि से भी यही दृश्य देखे। मैं ज्ञान-सूर्य की किरणें ग्रहण कर रही हूँ। 15 सेकेण्ड ये अनुभव करें।

इसके बाद मन-बुद्धि द्वारा देखें कि मैं आत्मा ज्ञान-सूर्य के पास से नीचे उतर रही हूँ। सूक्ष्मवतन में आकर अपने सम्पूर्ण स्वरुप में प्रवेश कर लेती हूँ। फिर वहाँ से सूक्ष्म शरीर सहित नीचे उतर कर उस स्थूल शरीर में प्रवेश कर लेती हूँ। सूक्ष्म शरीर सहित स्वयं को स्थूल शरीर में प्रवेश करते हुए व फिर उससे निकलते हुए देखें व अनुभव करें। इसी अनुभव को 5 बार करके फिर स्वयं को ज्ञान-सूर्य की किरणों के नीचे स्थित कर दें।

इस प्रकार दृढ़ता पूर्वक व रूचिपूर्वक अभ्यास करने से योग-निद्रा से भी बच जायेंगे व एकाग्रता में वृद्धि होगी। परन्तु यदि कोई योगी अमृतवेले को आनन्दकारी बनाना नहीं जानता तो सारा दिन उसे खालीपन का व पुरूषार्थ की मेहनत का ही अनुभव होगा।

बुद्धि की एकाग्रता के लिए बुद्धि में सद्विवेक भरें:-

मन को भी कन्ट्रोल करने वाली शक्ति है बुद्धि। परन्तु बुद्धि यदि श्रेष्ठ विवेक से परिपूर्ण नहीं है तो बुद्धि स्वयं को भी स्थिर नहीं कर पायेगी। मनुष्य पूरा जीवन अपनी बुद्धि में अनेक तरह का विवेक-अविवेक भरता है। वह जो कुछ भी उसमें भरता है उसे विवेक मानने की भूल करता है। अविवेक के कीटाणु विवेक को भी आनन्दहीन व नीरस बना देते हैं। जब भगवान स्वयं सर्वश्रेष्ठ विवेक प्रदान कर रहा हो, तब इधर-उधर से विवेक के नाम पर अविवेक का संग्रह करना अपनी एकाग्रता को स्वयं भंग करने का न्यौता देना है। वास्तव में बुद्धिवान व्यक्ति वही है जो अपनी बुद्धि को एकाग्र कर सके। परन्तु वह विवेक जो बुद्धि को उलझा दे, उसमें अहं की चिंगारी जला दे- उसे भटकाये - सद्विवेक नहीं कहलाता।

अतः श्रेष्ठ ज्ञान से बुद्धि को भरपूर कर दें। मनन का मक्खन बुद्धि को खिलाते रहें तो बुद्धि शक्तिशाली बनकर स्वयं भी एकाग्र हो जायेगी और मन को भी एकाग्र कर देगी।

ईश्वरीय प्यार से मन को भरें:-

ईश्वरीय प्यार में वह रस है जो आत्मा को मग्न करके निरन्तर योगयुक्त बना देता है। इस प्यार में जो डूबे, वे डूबे ही रह गये। संगमयुग पर हमें भगवान का प्यार सम्मुख मिला। हमने प्यार के सागर का प्यार छलकते देखा। उसने अपना प्यार दिखाया – हमारा उपकार करके, बिछुड़ों को गले लगाकर, पतितों को अपना बनाकर। बड़े-बड़े एहसान किये उसने हम पर। यदि हम केवल उसके उपकारों को ही याद करते रहें– तो प्यार में मग्न हो जाएं। प्रत्येक आत्मा को उसने विपत्तिकाल में मदद की होगी, सहारा दिया होगा, दुख के आसूँ पोछें होंगे और योग्य बनाया होगा। जरा याद करो– उसने तुम्हारे लिए क्या-क्या किया? जन्म-जन्म तुम उसके एहसानों को याद किया करोगे। तो मग्न हो जाओ उसके पुनीत प्यार में। यह प्यार की धारा तुम्हें पावन बना देगी। इसमें तृप्त होकर तुम्हारा मन एकाग्र हो जायेगा।

कर्मों में उपरामता लाओ

कर्म मनुष्य आदि काल से ही कर रहा है। हम कर्मयोगी है, अतः कर्म करते भी हमें एकाग्रचित्त होना है। कर्म तो भगवान भी करते हैं, योगी भी करते हैं और सांसारिक मनुष्य भी। भगवान के कर्म दिव्य, योगियों के महान और साधारण मनुष्यों के कर्म साधारण कहलाते हैं। यदि कर्म, योगी को उलझाने लगे, तो योगी कभी भी एकाग्रचित्त नहीं हो सकेगा। कर्म-समाप्ति के बाद भी यदि कर्मो के संकल्पों का ही प्रवाह योगी को भी अपने बहाव में बहाने लगे तो वह कभी भी सफल तपस्वी नहीं बन सकेगा। इसलिए सरलचित्त होकर कर्म करना, मैं-पन का त्याग करके कर्म करना, साक्षी भाव से कर्म करना, ईश्वर प्रति कर्म करना व अनासक्त भाव से कर्म करना परमावश्यक है। अभ्यास यही हो कि कर्म पूर्ण किया और उपराम हो गये, सहयोग दिया और उपराम हो गये, स्नेह दिया और न्यारे हो गये। साथ ही साथ हमें यह भी याद रहे कि सूक्ष्म पाप कर्म भी हमें भटकायेंगे और पुण्यों का बल हमारी एकाग्रता को बढ़ायेगा।

स्वयं को व्यर्थ संकल्पों से मुक्त करते चलो

यदि आपके मन में बीती हुई बातों का चिन्तन चलता है तो विचार करो कि वह तो ड्रामा की रीम में लिपट गया, अब गड़े मुर्दे उखाड़ने से क्या होगा? अब पास्ट की कडवाहट से वर्तमान का मजा क्यों किरकरा करुँ? तो जो बुरा था उसे भूल जाओ। क्योंकि बुरी घटनाओ का बार-बार चिन्तन करने से आत्मा कमजोर हो जाती है।

जो भविष्य में होना है, वह तो निश्चित है। मेरे चिन्तन से वह बदलेगा नहीं। इसलिए भावी कल्पनाओ के किले बनाने में अपनी संकल्प शक्ति को नष्ट न करो। भविष्य की चिन्ता अपने परमपिता पर छोड़ दो। फिर भी यदि बार-बार आपको संकल्प आता है कि मैं ये ये करुँगा.. तो उसे पेपर पर लिख दो।

जब व्यर्थ संकल्प आपके मन का द्वार खटखटाये तो अन्दर से ही उन्हें कह दो- अभी मैं अपने परम प्रियतम से मिलने में व्यस्त हूँ। तुम पीछे आना।

मन को कन्ट्रोल करने के लिए राजा बनकर भ्रकुटि सिंहासन पर बैठो और मन को आर्डर दो तो मन आप राजा का आदेश अवश्य मानेगा। परन्तु यदि आप राजा मानकर सीट पर बैठे बिना ही मन को आदेश देंगे तो वह कदापि नहीं मानेगा।

इस प्रकार मन को अनुमान से, कामुक कल्पनाओं से, चिन्ताओं से, भवष्यि के भय से व ईर्ष्या–द्वेष से मुक्त करते चलो। तो व्यर्थ से मुक्त मन एकाग्रता की स्थिति को प्राप्त करता जायेगा। इसके लिए एक बल एक भरोसे जीना व आत्म-विश्वास के साथ साहसपूर्वक जीवन जीना आवश्यक है।

मन–बुद्धि को काम दो–

सारा दिन मन-बुद्धि को श्रेष्ठ स्थिति में रखने के लिए उसे किसी अभ्यास में लगा देना पड़ेगा। हर घण्टे के लिए "अभ्यास को निश्चित" करने वाली योगी एक मास में ही सम्पूर्ण एकाग्रता को प्राप्त कर सकते हैं।

इसी के साथ-साथ एकान्त व मौन के द्वारा, आत्मिक दृष्टि के अभ्यास के द्वारा, मनन-शक्ति व ईश्वरीय नशे के अभ्यास के द्वारा भी एकाग्रता की शक्ति को बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण मदद प्राप्त होती है तथा जीवन में सन्तुष्ट आत्मा ही एकाग्रचित्त हो सकती है।

एकाग्रता की शक्ति के अभ्यास व सिद्धियाँ

मनोवैज्ञानिकों की मान्यता है कि मन एक साथ 10 मिनट ही एकाग्र हो सकता है उसके बाद एकाग्रता भंग होगी, चाहे वह कुछ क्षणों के लिए ही क्यों न हो। अनके तान्त्रिक साधनाओं में विद्वानों का कथन है कि जो योगी एक साथ 32 मिनट तक मन को एकाग्र कर सके वह मन चाही सिद्धियां प्राप्त कर सकता है।

हमारी एकाग्रता सर्वशक्तिवान पर है, उसके महावाक्यों पर है, अपने आत्मिक स्वरुप पर है, फरिश्ते स्वरुप पर है व भविष्य दिव्य स्वरुप पर है। एक संकल्प के साथ अपने लक्ष्य में मग्न हो जाना– यह है एकाग्रचित्त स्थिति। इसका दृढ़ता से अभ्यास करने से निम्न अनुभव होंगे–

⇒ मैं आत्मा प्रकृति की मालिक हूँ– इस पर एकाग्र होने से सम्पूर्ण प्रकृति पर तुम्हारा कन्ट्रोल हो जायेगा और प्रकृति के विघ्न तत्व को हम जो भी आदेश होगे वह उसे स्वीकार करेगा। यह है आत्मिक स्वरुप पर एकाग्रता की एक प्राप्ति।

⇒ अपने फरिश्ते स्वरुप का दर्शन करते हुए उस पर मन-बुद्धि को एकाग्र करने से अपने फरिश्ते रुप का सहज दर्शन होगा। इस अभ्यास को बढ़ाने से फरिश्ते स्वरुप द्वारा सहज ही विश्व सेवा का कार्य कर सकेंगे। सूक्ष्म रुप धारण करके कहीं भी भ्रमण कर सकेंगे अर्थात् विश्व भ्रमण कर सकेंगे।

⇒ अपने भविष्य स्वरुप को प्रकट करके उस पर एकाग्रता करने से अपना भविष्य स्पष्ट होता जाएगा। और ऐसे ही "स्वदर्शन चक्र" पर एकाग्र होने से स्वर्ग के सभी जन्म स्पष्ट होने लगेंगे।

⇒ निराकार परमपिता पर एकाग्र होने से तो अनगिनत अनुभव होंगे। मन-बुद्धि के शक्तिशाली होने के साथ 'दूरदृष्टि' का वरदान प्राप्त होगा। इस विश्व में कहाँ क्या हो राहा है– जहाँ का भी संकल्प करेंगे, वहाँ के दृश्य स्पष्ट होंगे।

⇒ एकाग्रता का अभ्यास बढ़ाने से मन पर पूर्ण कन्ट्रोल प्राप्त होगा। मन को जहाँ चाहे, जैसे चाहे, व जितने समय के लिए चाहे स्थिर कर सकेंगे। जो आत्माएँ इस अनुभव को प्राप्त करेगी, वे विश्व-राज्य का

सर्वश्रेष्ठ भाग्य प्राप्त कर सकेगी।

⇒ सम्पूर्ण एकाग्रता होने पर सम्पूर्ण पवित्रता, सम्पूर्ण आनन्द व सम्पूर्ण सन्तुष्टता की प्राप्ति होगी। मन अतीन्द्रिय सुख में निरन्तर रमन करने लगेगा और योगी निरन्तर योग-युक्त होकर कर्मातीत स्थिति को प्राप्त कर लेगा।

⇒ एकाग्रता की शक्ति वालों से ही 'देह के लोप' होने का अनुभव होगा। अर्थात् वे इतने सूक्ष्म स्वरुप में स्थित हो जायेंगे कि दूसरों को उनका देह दिखाई नहीं देगा।

⇒ वे दूसरों के मनोभावों को सहज ही पकड़ सकेंगे। दूसरों के भविष्य को जानना उनके लिए अति सरल होगा। लोग उनके नयनों द्वारा अपने भाग्य का अवलोकन कर सकेंगे।

⇒ एकाग्रचित्त योगी अपनी संकल्प शक्ति से जो चाहे कर सकेंगे। वे अपनी संकल्प शक्ति से ही अपने सम्पूर्ण कार्यों का संचालन कर सकेंगे।

अपनी मन-बुद्धि को आत्मिक स्वरुप पर एक मिनट स्थिर करने का अभ्यास प्रारम्भ करें, उसे 3 मिनट, 5 मिनट फिर 10 मिनट तक ले जाएं। इसी तरह दृढ़तापूर्वक प्रत्येक लक्ष्य पर अभ्यास करें। इसके लिए प्रारम्भ में किसी गीत, संगीत या ट्यून का भी आधार लिया जा सकता है। ध्यान को एकाग्र करने का भी अभ्यास किया जा सकता है।

तो हे महान चुने हुए योगियों, अब अपनी रुचियों का त्याग कर दो, अब अपने विस्तार को समेट लो, सेवाओं के विस्तार में बुद्धि को न उलझाओ, दूसरों पर ध्यान न दो, केवल स्वयं पर ही ध्यान दो। तुम्हें एकाग्रता के बल से आश्चर्यजनक व चमत्कारिक कार्य करने हैं, निर्बलों को बल देना है, दृष्टि देकर भक्तों को तृप्त करना है। अपनी एकाग्रता के महत्त्व को जानकर दत्तचित्त होकर इस शक्ति को बढ़ाओ और विश्व को दिखा दो कि योग-शक्ति वह महान कार्य कर सकती है जो विज्ञान की पहुँच से भी परे है।

तपस्या का स्वरुप – सहज योगी जीवन

बी. के. सूर्य, माउण्ड आबू

जीवन तो सभी को मिला है, परन्तु जीवन का सुख किसी-किसी को। धन-सम्पत्ति तो अनेकों को मिलती है, परन्तु धन का सुख सभी को नहीं मिला। पुत्र पौत्र तो सभी को होते हैं, परन्तु सहारा सभी को नहीं मिलता। पद और उपाधियों से तो अनेक विभूषित हैं, परन्तु परम-पद कुछ बिरले ही प्राप्त करते हैं। जीवन है, परन्तु जीना नहीं चाहते– यह भी बहुतों की अनुभूति है। भोजन है, परन्तु खा नहीं सके, यह भी बहुतों की नियति है। इन सबका कारण क्या?

ज्ञानी-जन सर्वज्ञ होते हैं। उन्हें प्रत्येक घटना के कारण का भी ज्ञान होता है। वे जानते हैं कि जो कुछ भी किसी के साथ हो रहा है, वह आक्रमण नहीं, उसके पीछे एक रहस्य है, इसलिए वे शोक नहीं करते। केवल वर्तमान के दृष्टा सदा ही प्रश्नों से आशकिंत रहते है और जीवन के सुख को किरकिरा कर देते हैं।

हम सभी पूर्व जन्मों में अनेक आत्माओं के साथ रहे। हमारे उनके साथ पाप-पुण्य की क्या-क्या गति रही– यह हमें नहीं मालूम। अब कल्प का अन्तिम समय सभी के कर्म खाते समाप्त होने को है। वे सभी आत्माएँ जिनसे हमारे पाप के खाते हैं, हमारे जीवन-पथ पर अनेक व्यवधान पैदा करने आ जाते हैं। और वे आत्माएं हमारी सहयोगी बन जाती है, जिनसे हमारा पुण्य-कृत्यों का मधुर सम्बन्ध रहा।

इस सत्य रहस्य को जानकर एक बुद्धिवान पथिक विचलित नहीं होता। वह जीवन यात्रा में आये हुए विघ्नों को सहर्ष स्वीकार कर लेता है, क्योंकि वह जानता है कि यह उसके ही बोये हुए बीज का फल है। परिस्थितियों व विघ्नों का रचियता स्वयं को जानने वाला योगी श्रेष्ठ स्वस्थिति द्वारा सरलता से परिस्थितियों को समाप्त कर लेता है।

परन्तु वह महानुभव जो विघ्नों से घबराकर, उदास होकर, स्वयं को चिन्ता व परेशानियों के पिंजरे में उलझा देता है, जीवन का सुख गँवा बैठता है। जीवन के संघर्ष में कुछ गँवा दिया जाता है तो कुछ पा लिया जाता है। 'कुछ भी खोये नहीं' – यह कामना मनुष्य को बहुत परेशान करती है। खोना और पाना,

लाभ और हानि, हार और जीत इन्हें अटल नियति मानकर चलने वाला मनुष्य भयभीत नहीं होता।

तो आओ हम सभी तपस्वी सहज जीवन बनाकर, ईश्वरीय जीवन का रस लें। कलियुगी मनुष्यों का है संघर्षमय जीवन, ज्ञानी बना लेते हैं सहज जीवन और योगी-जन सहज ईश्वरीय जीवन का परम सुख पाने के लिए अधिकारी बन जाते हैं।

हम सभी सतत् कर्मयोग के पथ पर अग्रसर हैं। कर्म हमसे निरन्तर जुड़ा है और कर्म फल परछाई की तरह ही हमारे पीछे लगा है। कर्म क्षेत्र पर सुख पाने के लिए हम ऐसे कर्मयोगी बनें जिन्हें कर्म कभी न उलझायें, जिन पर कर्म-परिणाम का प्रभाव भूत की तरह सवार न रहे और जो अपने सभी कर्म यज्ञ प्रति करते हुए कर्मो को प्रभु-अर्पण करते चलें।

कई मनुष्यों को सहज प्राप्तियां होती है तो कइयों को मेहनत के बाद। परन्तु ऐसे भी लोग होते हैं जिन्हें मेहनत के बाद भी निराशा ही हाथ लगती है। सच्चे तपस्वी सर्व प्राप्तियां सहज ही चरणों में आ जाते है। चाहे प्राप्तियां लौकिक हो या अलौकिक योगी उनका सहज अधिकारी होता है। अत्यन्त मेहनत से जीवन की आवश्यक प्राप्तियां होना या जीवन में एक के बाद एक विघ्न आना तपस्वी का लक्ष्य नहीं है। तपस्या में कर्मा है तो प्राप्तियों में भी कठिनाई है।

जब से तपस्या वर्ष प्रारम्भ हुआ, कइयों की तपस्या, समस्याओं का आह्वान करने वाली भी बन गई। कई इससे विचलित हुए और कई उदास। ज्यों ज्यों तपस्या बढ़ी, समस्याएं भी बढ़ी। परन्तु जरा सूक्ष्मता से नजर डालें, ऐसा क्यों हुआ? जिन्होंने जीवन भर श्रेष्ठ पुरुषार्थ नहीं किया था या मनोविकारों के बीज को नष्ट नहीं किया था, उनके दबे हुए विकार, संस्कार व विकर्म तब उदय हो गये, जब तीव्र तपस्या की किरणें उनके जीवन भर पड़ी। इसलिए इसे समस्याएं बढ़ना न कहकर विदाई लेना, कहना ही उपयुक्त होगा। इसलिए जिसके साथ भी ऐसा हुआ हो, वे घबरायें नहीं, इसे आन्तरिक स्वच्छता की एक विधि जानकर धैर्यता से तपस्या में मग्न रहे तो वह दिन शीघ्र ही आयेगा, जब जीवन समस्याओं से मुक्त बन जायेगा।

तपस्या करते समय हमारा सम्पूर्ण पुरुषार्थ सहज होता चले। साध कठिन न लगे, कुछ भी धारणा करना सहज अनुभव हो, कुछ भी त्याग करना म को भारी न करे, यह है सच्ची तपस्या का लक्षण।

हमारा पुरुषार्थ भी सहज सफल हो और कर्म भी सहज सफल हो लौकिक अलौकिक जो भी कार्य हम करना चाहें, वह सहज सम्पन्न हो। यह तपस्या का फल। ऐसा न हो कि तपस्या हो रही हो, परन्तु फल कहीं भी दिख न देता हो।

तपस्या काल में हमने अपने सारे बोझ व चिन्ताएं या तो स्वयं उतार सीख लिया हो या परमप्रिय सर्वशक्तिवान पर अर्पण करना सीख लिया हो तपस्वी जीवन अर्थात् चिन्ता रहित बेगमपुर के बादशाह की जीवन। सर्वशक्तिवा के साथ की अनुभूति द्वारा हमने गम रहित रहना सीखा हो। तपस्या में परमपि से मदद लेना सीखा हो। मांग कर नहीं, अधिकार से। यदि यह सब कुछ हम सीख लिया है तो हमारी तपस्या सफल हुई।

हमारा सम्पूर्ण ज्ञान और योग, हमारी सम्पूर्ण तपस्या जीवन क आनन्दकारी बनाने के लिए ही है। यदि तपस्या के लिए हम तनाव-युक्त हो जा हो, यदि समयाभाव में हम निराश हो जाते हों, यदि हमने स्व-परिवर्तन का सर मार्ग न जाना हो तो हमारी तपस्या सफल नहीं मानी जाएगी। हमें यह चेक कर है कि कौन-कौन सी बातें, जीवन के आनन्द को विषैला करती हैं और उ ज्ञान-बल व योगबल से हल्का कर देना है।

यदि आपके जीवन में आपको बहुत भाग दौड़ लगती है। सवेरा हु और रात हो गई– यूं ही जीवन बीत रहा है, यदि आपको बहुत कम सम मिलता है तो आप अपने मन को तीव्र न दौड़ायें। ऐसा न हो कि आपसे ज्या व्यस्त आपका मन हो। जीवन में चाहे कितनी भी भाग-दौड़ हो, बाह्य रुप उतावलापन हो, मन को शान्त बनाये रखना– यही सच्चे तपस्वी की पहचान है तो केवल योगाभ्यास पर ही हमारा ध्यान न हो, इन सूक्ष्म धारणाओ से भी ह स्वयं का श्रृंगार करते रहें।

सहज तपस्या का अर्थ है जीवन में प्रत्येक क्षेत्र में सहज स्वभाव बनाना। मान लो, लोग ठीक काम नहीं करते, आपके बदले हुए संग जा रहे हैं, कहीं आपका कार्य बिगड़ रहा है, दूसरे परेशानियां विकराल हो रही हैं, सम्बन्धी आप पर दबाव डाल रहे हैं, कर्म करने पर भी दूसरे आपसे सन्तुष्ट नहीं हैं या दूसरे सदा ही आप पर ही छींटाकशी करते हैं– इन सभी विभिन्न बातों से आप सन्तुलित रहना सीखें। यहां हम यह याद रखना है कि सन्तुलन का अर्थ न तो असमर्थ बनना है और न अपने उत्तरदायित्व को भुला देना। परन्तु सन्तुलित होने से आपकी संकल्प शक्ति बढ़ेगी फलस्वरूप आपका आत्म-बल बढ़ेगा और सहज रूप से आप सब कुछ ठीक कर सकेंगे। ध्यान रहे आपकी स्थिति बिगाड़कर दूसरों को सुधारने का प्रयत्न करना, स्वयं स्वमान से नीचे उतरकर परिस्थितियों को ठीक करने की सोचना या अपने परमपिता को भूलकर कार्यों में सफलता खोजना– अन्धकार में सुई की खोज करने जैसा है।

यह सत्य है कि जिनकी स्थिति श्रेष्ठ उनके कार्य सफल। जिनकी स्थिति निर्विघ्न, उनका जीवन सभी विघ्नों से मुक्त, जिनका एक परमपिता से सम्बन्ध ठीक, उनके लौकिक सम्बन्ध भी स्वतः ही ठीक रहेंगे और उनकी ओर से कोई भी परेशानी नहीं होगी। परन्तु जब तपस्वी कहीं भी उलझकर अपनी तपस्या को भंग कर बैठे हैं, तब कर्म क्षेत्र पर भी संघर्ष शुरु होता है। तपस्वी-काल में सभी ने श्रेष्ठ स्थिति के महत्व को जान लिया। जहाँ श्रेष्ठ तपस्वी है, वहाँ सेवा स्वतः ही द्वार खटखटाने लगती है, जहाँ श्रेष्ठ तपस्या है, जहाँ स्थिति अच्छी वहाँ सहज ही सभी सहयोगी बन जाते हैं, जहाँ आत्मा स्वयं में सन्तुष्ट वहाँ लौकिक अलौकिक कार्यों में सहज ही सन्तुष्टता अनुभव होती है। इसलिए हमें अन्य किसी बात को महत्व न देकर अपनी तपस्या को महत्व देना चाहिए।

जीवन में आप कहीं भी परेशान न हों- यह हमारी तपस्या का प्रत्यक्षफल है। शरीर ने साथ देना छोड़ दिया हो या आर्थिक ही कोई अनहोनी घटना घट गई हो, दूसरों के पास आपका महत्व कम हो गया हो या आपको उचित सम्मान व अधिकार न मिल रहा हो। कुछ लोग आपके पीछे ही पड़े हों या एक के बाद एक विघ्न आप पर हावी होते जा रहे हों, हमारा साथी कौन है... इस परीक्षा में हमें सम्पूर्ण विजयी होना है... भगवान की छत्रछाया में रहने वालों